सुखी वही जो कुछ नहीं है

H
181.49
K 897 S

जे. कृष्णमूर्ति

INDIAN INSTITUTE
OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY, SHIMLA

सुखी वही जो कुछ नहीं है

एक युवा मित्र को लिखे पत्र

जे. कृष्णमूर्ति

कृष्णमूर्ति फ़ाउंडेशन इंडिया
राजघाट फ़ोर्ट, वाराणसी

सुखी वही जो कुछ नहीं है

जे. कृष्णमूर्ति द्वारा एक युवा मित्र को लिखे कुछ पत्रांशों का हिंदी अनुवाद।
पुपुल जयकर की पुस्तक 'Krishnamurti A Biography' से साभार उद्धृत ।
अनुवाद : हरीश

मूल अंग्रेजी पाठ
© कृष्णमूर्ति फ़ाउंडेशन ऑफ अमेरिका
हिंदी अनुवाद
© कृष्णमूर्ति फ़ाउंडेशन इंडिया

चौथा संस्करण : जनवरी 2005
पुनर्मुद्रण मार्च 2008
प्रकाशक :
कृष्णमूर्ति फ़ाउंडेशन इंडिया
राजघाट फ़ोर्ट, वाराणसी 221 001
फोन : 0542-2430289
मूल्य : 20.00 रुपये
मुद्रक :
सत्तनाम प्रिंटर्स, पांडेयपुर, वाराणसी

Sukhi Wahi Jo Kuchh Nahin Hai

Hindi Translation of a few extracts from Krishnamurti's Letters.
Courtesy : Pupul Jayakar 'Krishnamurti A Biography'.
Translation : Harish

For the original English Text
© Krishnamurti Foundation of America
For the Translation into Hindi
© Krishnamurti Foundation India

Fourth Edition in January 2005
Reprint March 2008
Price : Rs. 20.00
Published by
Krishnamurti Foundation India
Rajghat Fort, Varanasi 221 001
Phone : 0542-2430289
Email : kcentrevns@satyam.net.in
Printed by
Sattanam Printers
Pandeypur, Varanasi 221 002, Ph 2585432

Library IIAS, Shimla
H 181.49 K 897 S
G6097

परिचय

जिड्डू कृष्णमूर्ति का जन्म 11 मई 1895 को आन्ध्र प्रदेश के एक छोटे-से कस्बे मदनापल्ली में एक धर्म-परायण परिवार में हुआ था। किशोरकाल में उन्हें थिऑस्फ़िकल सोसाइटी की अध्यक्ष डॉ० एनी बेसेंट द्वारा गोद ले लिया गया। कृष्णमूर्ति आगामी 'विश्व शिक्षक' ('वर्ल्ड टीचर') होंगे, ऐसा श्रीमती बेसेंट और अन्य लोगों ने घोषित किया। थिऑस्फ़ी के अनुयायी पहले-ही किसी 'विश्व-शिक्षक' के आगमन की भविष्यवाणी कर चुके थे। धर्मग्रन्थों में भी ऐसा वर्णित है कि मानवता के उद्धार के लिए समय-समय पर 'विश्व शिक्षक' मनुष्य का रूप धारण करता है।

सन् 1922 में कृष्णमूर्ति किन्हीं गहरी आध्यात्मिक अनुभूतियों से होकर गुजरे और उन्हें उस करुणा का स्पर्श हुआ— जैसाकि उन्होंने कहा— जो सारे दुख-कष्टों को हर लेती है। इसके बाद आगे के साठ से भी अधिक वर्षों तक, जब तक कि 17 फरवरी 1986 को उनकी मृत्यु नहीं हो गई, वे अनथक रूप से पूरी दुनिया का दौरा करते रहे— सार्वजनिक वार्ताएँ और साक्षात्कार देते हुए, निजी विवेचनाएँ और संवाद करते हुए तथा लिखते और बोलते हुए। उन्होंने यह भूमिका सत्य के प्रेमी और एक मित्र के रूप में निभाई— गुरु के रूप में उन्होंने स्वयं को कभी नहीं रखा। उन्होंने जो भी कहा वह उनकी अन्तर्दृष्टि का संप्रेषण था— वह महज किताबी या बौद्धिक ज्ञान पर आधारित नहीं था। उन्होंने दर्शनशास्त्र की किसी नई पद्धति या प्रणाली की व्याख्या नहीं की, बल्कि हमारी जो रोज़मर्रा की ज़िन्दगी है उसी की उन्होंने चर्चा की : भ्रष्टाचार और हिंसा से भरे समाज में जो चुनौतियाँ हैं, इन्सान जो

कि सुरक्षा और सुख की तलाश में भटक रहा है, और उसका भय, दुख, क्रोध इत्यादि। उन्होंने बड़ी बारीकी और वास्तविकता के साथ मानव मन की गुत्थियों को सुलझाया और इस बात की महत्ता की ओर संकेत किया कि हमारा दैनिक जीवन सच्चे अर्थों में ध्यान और धार्मिकता की गुणवत्ता से आलोकित होना चाहिए। उन्होंने एक ऐसे आमूलचूल और बुनियादी परिवर्तन की आवश्यकता पर बल दिया जो एक नितान्त नये मानस और नयी संस्कृति को जन्म दे सके।

हालाँकि कृष्णमूर्ति को पूरे विश्व में अब तक के सबसे महान धार्मिक शिक्षकों में माना जाता है, फिर भी उन्होंने स्वयं को कभी किसी धर्म, सम्प्रदाय या देश विशेष से जुड़ा हुआ नहीं माना। उन्होंने खुद को कभी किसी राजनैतिक सोच या विचारधारा से नहीं जोड़ा। इसके विपरीत उनका कहना था कि ये चीजें मनुष्य-मनुष्य के बीच अलगाव पैदा करती हैं और अन्ततः संघर्ष और युद्ध का कारण बनती हैं। उन्होंने इस बात पर हमेशा जोर दिया कि मनुष्य की चेतना और मानवजाति की चेतना अलग नहीं है, बल्कि हमारे भीतर पूरी मानव जाति, पूरा विश्व प्रतिबिम्बित होता है। प्रकृति और परिवेश से मनुष्य के गहरे रिश्ते और तादात्म की उन्होंने बात की। इस तरह उनकी शिक्षा मानव निर्मित सारी दीवारों, धार्मिक विश्वासों, राष्ट्रीय बँटवारों, और साम्प्रदायिक दृष्टिकोणों से परे जाने का सन्देश देती हैं।

कृष्णमूर्ति के साहित्य में उनकी सार्वजनिक वार्ताएँ, प्रश्नोत्तर, परिचर्चाएँ, साक्षात्कार, परस्पर संवाद, डायरी और उनका खुद का लेखन, सभी कुछ शामिल है। बहुत सारी पुस्तकों के रूप में मूल अंग्रेजी में प्रकाशन के साथ इनका विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में अनुवाद भी हो चुका है। इसके अतिरिक्त बिल्कुल प्रामाणिक और मूल रूप में उनकी

शिक्षा ऑडियो और वीडियो टेपों के माध्यम से भी उपलब्ध है। उन्होंने अध्ययन केन्द्रों ('स्टडी सेन्टर') की स्थापना भी की, जहाँ सत्यान्वेषी जाकर उनकी शिक्षाओं का अध्ययन कर सकते हैं और अपने भीतर की यात्रा भी। कृष्णमूर्ति ने भारत और विदेशों में विद्यालयों की भी स्थापना की जहाँ बच्चों को भय और प्रतिस्पर्धा से रहित वातावरण में खिलने और विकसित होने का अवसर मिल सके।

'कृष्णमूर्ति फ़ाउण्डेशन इण्डिया' कृष्णमूर्ति की किताबों को अंग्रेजी और विभिन्न भारतीय भाषाओं में उपलब्ध कराने की दिशा में कार्यरत है। फ़ाउण्डेशन का प्रमुख सरोकार है कि कृष्णमूर्ति की शिक्षा को किसी भी रूप में तोड़ा-मरोड़ा या विकृत नहीं किया जाये और जितना अधिक सम्भव हो लोगों को आसानी से उपलब्ध कराया जा सके।

प्रस्तुत पुस्तक के अनुवाद कार्य को पूरा करने के लिए फ़ाउण्डेशन श्री हरीश का आभार प्रकट करता है।

●

सन् 1948 से सन् 1960 के प्रारम्भिक दिनों के बीच कृष्णजी लोगों के लिए आसानी से सुलभ थे और इस दौरान अनेक लोग उनके पास आये। टहलते हुए, व्यक्तिगत मुलाकातों में, चिट्ठी-पत्री में सम्बन्ध खिलते गये। निम्नलिखित पत्र उन्होंने जिस युवा महिला मित्र को लिखे वह उनके पास घायल तन-मन की दशा में आयी थी। जून 1948 से मार्च 1960 के बीच लिखे इन पत्रों में दुर्लभ करुणा और स्पष्टता झलकती है। इन्हें पढ़ते हुए मन के घाव भरने लगते हैं तथा नवबोध का उदय होता है, अलगाव और फासले मिट जाते हैं, शब्दों की एक ऐसी धारा बहती है जिसमें एक भी शब्द अनावश्यक नहीं होता, इस प्रकार जख्मों का भरना और शिक्षा दोनों एक साथ घटित होते हैं।

मानसिक रूप से विनम्र बनो। मजबूत और सुदृढ़ होने में नहीं बल्कि लचीला होने में ही शक्ति छिपी है। आँधी-तूफान में लचीले पेड़ ही खड़े रह पाते हैं। एक फुर्तीले मन की शक्ति प्राप्त करो।

जीवन अद्भुत है, बहुत-सी चीजें अप्रत्याशित रूप से घटित होती हैं, समस्या का सिर्फ विरोध करने से उसका हल नहीं होगा। मनुष्य के पास असीम विनम्रता और एक निष्कपट हृदय होना चाहिए।

जीवन तो एक तलवार की धार है जिस पर मनुष्य को गहरी सावधानी और नमनीय प्रज्ञा के साथ चलना है।

जीवन इतना समृद्ध है, इसके पास इतने सारे खजाने हैं पर हम इसके पास खाली हृदय लेकर जाते हैं, हमें पता नहीं है कि जीवन की समृद्धि से हम अपने हृदय को कैसे भरें। हम आन्तरिक रूप से निर्धन हैं, और धन जब हमें दिया जाता है तो हम उसे ठुकरा देते हैं। प्रेम एक खतरनाक चीज है, यह उस एकमात्र क्रान्ति को लाता है जो समग्र सुख देती है। हममें से थोड़े से लोग ही प्रेम का सामर्थ्य रखते हैं, वस्तुत: बहुत कम लोग प्रेम चाहते हैं। हम अपनी ही शर्तों पर प्रेम करते हैं और प्रेम को खरीद-बिक्री की एक वस्तु बना देते हैं। हमारे पास बाजारू मानसिकता है और प्रेम कोई बाजारू चीज नहीं है, यह लेन-देन का मामला नहीं है। यह हमारे अस्तित्व की वह अवस्था है जिसमें मनुष्य की सारी समस्याओं का समाधान हो जाता है। हम बिना पेंदे का एक बरतन लेकर कुएँ के पास जाते हैं और इसलिए हमारा जीवन एक भद्दा-सा मामला बन जाता है— क्षुद्र और लघु।

यह पृथ्वी कितनी प्यारी जगह हो सकती है, क्योंकि यहाँ इतनी सुन्दरता है, इतनी महिमा है, ऐसा शाश्वत लावण्य है। हम दु:ख-दर्द में उलझे हुए हैं और इसके बाहर निकलने की हम फिक्र नहीं करते; तब भी नहीं, जब कोई हमें बाहर निकलने का रास्ता दिखाता है।

समझ में नहीं आता, परन्तु एक व्यक्ति प्रेम की लौ से प्रज्वलित है। एक ऐसी लौ है जिसे बुझाया नहीं जा सकता। उस व्यक्ति के पास

यह इतना अधिक है कि वह इसे हर किसी को देना चाहता है और देता भी है। यह एक विशाल बहती हुई नदी के समान है, नदी हर शहर और गाँव को जल एवं पोषण देती है, मनुष्य द्वारा फैलायी हुई गन्दगी इसमें फेंकी जाती है और यह दूषित हो जाती है लेकिन पानी जल्दी ही अपने आपको साफ कर लेता है और तेजी से आगे बढ़ जाता है। कोई भी चीज प्रेम को दूषित नहीं कर सकती, क्योंकि इसमें सब कुछ लय हो जाता है— अच्छी और बुरी चीज, सुन्दर और कुरूप चीज। यही एकमात्र वह चीज है जिसकी अपनी अनन्तता स्वयं है।

पेड़ अत्यन्त गरिमा के साथ खड़े थे और मानव-निर्मित तारकोल की सड़क तथा यातायात से वे आश्चर्यजनक रूप से अप्रभावित थे। उनकी जड़ें गहराई तक नीचे थीं, जमीन के नीचे, और उनके शिखर आसमान को छू रहे थे। हमारी जड़ें भी जमीन में हैं, जो कि होनी ही चाहिए, लेकिन हम जमीन से ही चिपके रहते हैं, इसी पर रेंगते-सरकते रहते हैं, बहुत थोड़े से लोग ही आकाश में उड़ान भरते हैं। वे ही एकमात्र सृजनात्मक और सुखी लोग हैं। बाकी लोग तो इस खूबसूरत धरती पर एक दूसरे को बिगाड़ने और तबाह करने में ही लगे हैं— एक दूसरे की बुराई करके और चोट पहुँचा कर।

उन्मुक्त होओ। यदि अतीत में जीना ही पड़े तो जीओ, लेकिन अतीत के विरुद्ध संघर्ष मत करो; जब अतीत उभर कर सामने आये तो उसमें पैठ कर देखो, न उसे अपने से दूर हटाने की कोशिश करो और

न ही उसे जोर से पकड़ने की कोशिश करो। इन सारे वर्षों का अनुभव, दु:ख और खुशियाँ, घृणित प्रहार, सम्बन्ध-विच्छेद की तुम्हारी यादें, दूर से इन सबका बोध— ये सारी चीजें समृद्धता और सुन्दरता की वृद्धि करेंगी। तुम्हारे हृदय के पास जो है वही महत्त्वपूर्ण है, और चूँकि यह लबालब भरा हुआ है इसलिए तुम्हारे पास सब कुछ है, तुम सब कुछ हो।

अपने सभी विचारों और भावों के प्रति सतर्क रहो, किसी भी विचार या भाव को बिना देखे और बिना उसकी समस्त अन्तर्वस्तु को आत्मसात् किए मत जाने दो। आत्मसात् करने का अर्थ है विचार-भाव की समस्त अन्तर्वस्तु को देख लेना। यह कुछ ऐसा है मानो कोई व्यक्ति एक कमरे में प्रवेश करे और एक झलक में ही उसकी सम्पूर्ण अन्तर्वस्तु को, उसके वातावरण को देख ले और उसके प्रति सजग हो जाय क्योंकि यही व्यक्ति को तीव्र रूप से संवेदनशील, सतर्क और विनम्र बनाता है। निन्दा या मूल्यांकन मत करो बल्कि अत्यन्त सतर्क बनो। पृथक्करण की प्रक्रिया और धातु मलने से ही खरा सोना निकलता है।

'जो है' उसे देखना सचमुच बहुत कठिन है। साफ-साफ अवलोकन कैसे किया जाता है? एक बहती हुई जलधारा के सामने जब कोई रुकावट आ जाती है तो वह शान्त और स्थिर नहीं रहती, वह अपने भार से उस रुकावट को तोड़ डालती है या उसके ऊपर से बहने लगती है या उसके नीचे से अथवा उसके अगल-बगल से अपना रास्ता निकाल लेती है, लेकिन वह चुपचाप बैठी नहीं रहती, वह कुछ-न-कुछ किये बिना रह

ही नहीं सकती। ऐसा कहा जा सकता है कि वह प्रज्ञापूर्वक विद्रोह करती है। व्यक्ति को प्रज्ञापूर्वक विद्रोह करना ही चाहिए और 'जो है' उसे प्रज्ञापूर्वक स्वीकार करना चाहिए। 'जो है' उसे देखने के लिए प्रज्ञापूर्ण विद्रोह की हिम्मत होनी चाहिए। रुकावट के लिए गाड़े गये खम्भे को देखने में भूल न करने के लिए थोड़ी-सी प्रज्ञा आवश्यक है, लेकिन साधारणतया आदमी जो चाहता है उसे पाने के लिए इतना आतुर रहता है कि वह रुकावट के इस खम्भे से टकरा जाता है, और इससे या तो वह टूट जाता है या इसके विरुद्ध संघर्ष करते-करते वह अपने आपको थका डालता है। एक रस्से को रस्से की तरह देखने के लिए साहस की जरूरत नहीं है, लेकिन एक रस्से को गलती से साँप मान बैठने पर उसका अवलोकन करने के लिए साहस की जरूरत है। मनुष्य को सन्देह करना चाहिए, सदा खोज करनी चाहिए, असत्य को असत्य की तरह देखना चाहिए। अवधान की गहनता द्वारा साफ-साफ देखने की शक्ति प्राप्त होती है; नदी कभी निष्क्रिय नहीं रहती, वह सदा सक्रिय रहती है। क्रियाशील होने के लिए व्यक्ति को निषेध और नकार की दशा में होना चाहिए; यह नकार ही स्वयं अपनी सकारात्मक क्रियाशीलता को उत्पन्न करता है। मेरी समझ में असली समस्या है साफ-साफ देखने की, तब यह साफ-साफ देखना ही स्वयं अपनी क्रियाशीलता को ले आता है। जब लचीलेपन और नमनीयता की गुणवत्ता आ जाती है तो सही और गलत का प्रश्न नहीं रह जाता।

व्यक्ति को अपने भीतर अत्यन्त साफ और स्पष्ट होना चाहिए। तब मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि हर चीज सही-सही घटित होगी;

तुम्हारी समझ साफ एवं स्पष्ट हो जाये तो फिर तुम देखोगी कि तुम्हारे कुछ किए बिना सारी चीजें अपने आप सही आकार ले लेंगी। सही का अर्थ वही चीज नहीं है जिसकी व्यक्ति आकांक्षा करता है।

सम्पूर्ण क्रान्ति होनी चाहिए, केवल बड़ी-बड़ी चीजों में नहीं बल्कि रोजमर्रा की छोटी-छोटी चीजों में भी। तुममें वह क्रान्ति घटित हो चुकी है, अब चुपचाप मत बैठ जाओ बल्कि इसमें लगी रहो। अपने भीतर इस अग्नि को प्रज्वलित रखो।

मुझे आशा है कि रात तुम अच्छी तरह सोयी, सुबह तुमने अपनी खिड़की से सूर्योदय के दृश्य का आनन्द लिया और रात सोने के पूर्व तुम आसमान में तारों को शान्तिपूर्वक देख पायी। प्रेम और इसकी असाधारण कोमलता एवं 'शक्ति' के बारे में हम कितना कम जानते हैं, कितनी आसानी से हम प्रेम शब्द का प्रयोग करते हैं; सेनापति, कसाई, धनीमानी लोग, युवा लड़के और लड़कियाँ, सभी इस शब्द का प्रयोग करते हैं। लेकिन प्रेम और इसकी विशालता, इसकी अमरता तथा इसकी अथाह गहराई के बारे में वे कितना कम जानते हैं! प्रेम करने का अर्थ है शाश्वतता का बोध होना।

सम्बन्ध भी कैसी चीज है, और कितनी आसानी से हम एक सम्बन्ध विशेष की उस आदत का शिकार हो जाते हैं, चीजों को आँख मूँदकर मान लिया जाता है, और उनमें किसी भी परिवर्तन को बर्दाश्त नहीं किया जाता, अनिश्चितता की ओर किसी भी गति को एक क्षण

के लिए भी स्वीकार नहीं किया जाता। हर चीज को इस तरह बँधा-बँधाया, नियमित और सुरक्षित कर लिया जाता है कि वसन्त को पुनर्जीवन देने वाली खुली हवा और ताजगी के लिए कोई सम्भावना ही नहीं रह जाती। इसी को तथा इसी तरह की अन्य चीजों को सम्बन्ध कहा जाता है। यदि हम ध्यान से देखें तो पायेंगे कि सम्बन्ध कहीं अधिक सूक्ष्म चीज है, बिजली से भी अधिक तेज, पृथ्वी से भी विशाल, क्योंकि सम्बन्ध ही जीवन है। जीवन द्वन्द्व और संघर्ष है। हम चाहते हैं कि सम्बन्ध अनगढ़ और कच्चा रहे तथा हमारे नियंत्रण के अधीन ही रहे। अत: यह अपनी सुगन्ध और सुन्दरता खो देता है। और यह सब इसलिए होता है क्योंकि व्यक्ति प्रेम नहीं करता, और वस्तुत: वही सबसे बड़ी चीज है, क्योंकि इसमें स्वयं को पूर्णत: विसर्जित होना पड़ता है।

यह ताजगी और नवीनता की गुणवत्ता है जो महत्त्वपूर्ण है, अन्यथा जीवन एक बँधा-बँधाया नित्यक्रम एवं आदत बन जाता है; और प्रेम कोई आदत नहीं है, उबाऊ चीज नहीं है। अधिकांश लोग तो आश्चर्य का सारा बोध खो चुके हैं। वे हर चीज को आँख मूँद कर स्वीकार कर लेते हैं, सुरक्षा की यह भावना स्वतन्त्रता को तथा अनिश्चितता के आश्चर्य को नष्ट कर देती है।

वर्तमान से अलग हटकर, हम एक सुदूर भविष्य का प्रक्षेपण कर लेते हैं। समझने के लिए जो अवधान आवश्यक है वह वर्तमान में ही होता है। अवधान में सदा एक सन्निकटता का बोध मौजूद रहता है। अपने इरादों की स्पष्ट समझ रखना सचमुच एक दुष्कर कार्य है; इरादा एक लौ और लपट की तरह है, जो व्यक्ति को समझने के लिए निरन्तर प्रेरित

कर रहा है। अपने इरादों और मंशाओं की स्पष्ट समझ रखो, और तुम देखोगी कि चीजें हल होने लगती हैं। आवश्यकता केवल इस बात की है कि व्यक्ति वर्तमान के क्षण में स्पष्ट समझ रखे, लेकिन यह वस्तुत: उतना आसान नहीं है जितना कि सुनने में लगता है। नया बीज लगाने के लिए व्यक्ति को खेत तैयार करना होगा और एक बार जहाँ बीज बो दिया गया कि उस बीज की अपनी ही जीवन-शक्ति और ताकत फल एवं नये बीज का निर्माण करने लगती है। बाहरी सुन्दरता कभी स्थायी नहीं होती, यदि आन्तरिक आनन्द और उल्लास न हो तो वह जल्दी ही नष्ट हो जाती है। हम बाहरी को ही विकसित करने में लगे रहते हैं, और चमड़े के नीचे जो हमारा आन्तरिक अस्तित्व है उसकी ओर हम बहुत ही कम ध्यान देते हैं, लेकिन यह आन्तरिक ही है जो बाह्य को पराजित कर देता है। सेब के फल के भीतर का कीड़ा ही सेब की ताजगी को नष्ट कर देता है।

एक पुरुष और नारी के पास बहुत बड़ी प्रज्ञा होनी चाहिए ताकि वे एक साथ रह सकें, भुला दिए जायें, एक दूसरे के सामने झुके नहीं या एक-दूसरे से शासित न हों। सम्बन्ध जीवन की सबसे कठिन चीज है।

किसी वातावरण से मनुष्य कितना विचित्र रूप से प्रभावित हो जाता है, मनुष्य के पास एक मैत्रीपूर्ण तनाव होना चाहिए—एक सजीव अवधान का बोध जिसमें मनुष्य स्वतन्त्रता एवं सहजता से प्रस्फुटित हो सके। बहुत कम लोगों के पास यह वातावरण है, इसलिए अधिकांश

लोग अविकसित रह जाते हैं— शारीरिक रूप से और मनोवैज्ञानिक रूप से भी। मैं बहुत आश्चर्यचकित हूँ कि उस विचित्र वातावरण में रहकर भी तुम विकृत होने से बच गयी। यह देखा जा सकता है कि तुम पूरी तरह बरबाद, कलंकित और उत्पीड़ित क्यों नहीं हुई; बाहरी रूप से जितनी तेजी से संभव था तुमने स्वयं को परिस्थिति के लायक बना लिया तथा भीतरी रूप से तुमने स्वयं को सुला दिया। यह भीतरी संवेदनशून्यता थी जिसने तुम्हें बचा लिया। यदि तुमने स्वयं को संवेदनशील तथा आन्तरिक रूप से जागरूक होने दिया होता तो तुम उसे झेल नहीं पाती और द्वन्द्व का शिकार हो जाती तथा अब तक तुम टूट चुकी होती। अब चूँकि तुम्हारी समझ स्पष्ट है और तुम अपने भीतर जग चुकी हो, अत: वातावरण के साथ तुम्हारा कोई द्वन्द्व नहीं है और यह द्वन्द्व ही है जो विकृति उत्पन्न करता है। यदि तुम आन्तरिक रूप से अत्यन्त सतर्क और जागरूक रहो तथा बाहरी चीजों के साथ स्नेहपूर्वक सामंजस्य स्थापित कर लो तो तुम सदा अनाहत और अखंडित बनी रहोगी।

विकल्प अधिक दिनों तक कायम नहीं रहते। बहुत थोड़ी-सी चीजें अपने पास रखने पर भी कोई व्यक्ति सांसारिक हो सकता है। शक्ति की इच्छा चाहे जिस रूप में हो— किसी संन्यासी की शक्ति, एक बड़े पूँजीपति की शक्ति, किसी राजनीतिज्ञ या मठाधीश की शक्ति— वह सांसारिक है। शक्ति की लालसा निष्ठुरता उत्पन्न करती है और स्वयं के महत्व को ही अधिक-से-अधिक बल देती है। स्वयं को फैलानेवाली यह आक्रामकता मूल रूप से सांसारिकता ही है। विनम्रता सरलता है, लेकिन आरोपित या पैदा की गई विनम्रता सांसारिकता का ही दूसरा रूप है।

बहुत कम लोगों को ही अपने आन्तरिक परिवर्तनों, आघातों, द्वन्द्वों और विकृतियों का बोध होता है। और यदि वे इनसे अवगत भी होते हैं तो वे उन्हें अपने से परे हटाने की या उनसे दूर भागने की कोशिश करते हैं। पर तुम ऐसा मत करना। मैं नहीं समझता कि तुम ऐसा करोगी, लेकिन अपने विचारों और भावनाओं के साथ अत्यधिक निकट होकर जीने में भी एक खतरा है। मनुष्य को बिना किसी चिन्ता और बिना किसी दबाव के अपने विचारों और भावनाओं के प्रति सजग होना है। तुम्हारे जीवन में वास्तविक क्रांति घटित हो चुकी है, तुम्हें बिल्कुल सजग होना चाहिए, अपने विचारों और भावों के प्रति— उन्हें बाहर आने दो, उन पर अंकुश मत लगाओ, उन्हें अपने भीतर रोके मत रखो। चाहे वे विचार और भावनाएँ अति मंद हों या अति प्रचण्ड, उन्हें बाहर बह जाने दो, लेकिन उनके प्रति सजग अवश्य रहो।

किन चीजों के साथ तुम्हारी इच्छाएँ व्यस्त रहती हैं; यदि तुम्हारी कोई इच्छाएँ हैं? यह संसार एक अच्छी जगह है। इससे भागने के लिए हम सब कुछ करते हैं— पूजा, प्रार्थना, प्रेम और भय। हम यह नहीं जानते हैं कि हम समृद्ध हैं या दरिद्र, हम अपने भीतर की गहराई में कभी नहीं गये हैं और 'जो है' उसकी खोज नहीं की है। हम सतह पर ही जीते हैं, बहुत थोड़े से ही संतुष्ट हो जाते हैं और ऐसी ही छोटी-छोटी चीजों से सुखी एवं दुखी हो जाते हैं। हमारे क्षुद्र मन के पास क्षुद्र समस्याएँ हैं और उनके क्षुद्र समाधान भी, इसी तरह हम अपने दिन बिताये चले जाते हैं। हम प्रेम नहीं करते, और जब करते हैं तो यह हमेशा भय और निराशा तथा दुख और अभिलाषा के साथ होता है।

मैं सोच रहा था कि यह कितना महत्त्वपूर्ण है कि हम निष्पाप हों अर्थात् हमारे पास निष्पाप मन हो। अनुभव तो अवश्यंभावी हैं, शायद आवश्यक भी; जीवन अनुभवों की एक शृंखला है, लेकिन इसकी कोई आवश्यकता नहीं कि मन संग्रह करने की माँगों में बोझिल बना रहे। यह हर अनुभव को मिटा सकता है और स्वयं को निष्पाप रख सकता है— बिल्कुल भारविहीन। यह अति आवश्यक है, अन्यथा मन कभी ताजा, सतर्क और लचीला नहीं हो सकता। समस्या यह नहीं है कि मन को लचीला 'कैसे' रखें; 'कैसे' का अर्थ है एक पद्धति की खोज, और पद्धति कभी मन को निष्पाप नहीं बना सकती; वह इसे व्यवस्थित बना सकती है, लेकिन निष्पाप और सर्जनात्मक कदापि नहीं।

कल दोपहर बाद अचानक वर्षा होने लगी और कल रात की बारिश तो और भी जबरदस्त थी। ऐसा मैंने पहले देखा-सुना नहीं था। यह वर्षा ऐसी थी मानो आसमान फट पड़ा हो। उसके साथ एक गहन शान्ति थी, मानो किसी भारी वजन से उत्पन्न शान्ति, और वह वजनदार चीज अपने आपको पृथ्वी पर उँडेल रही थी।

स्वयं को सरल और साफ रखना सदा कठिन है। संसार सफलता की पूजा करता है, सफलता जितनी बड़ी हो उतना ही अच्छा; श्रोताओं की संख्या जितनी बड़ी हो उतना ही बड़ा वक्ता; बड़े मकान, बड़ी कार, बड़ा हवाई जहाज और बड़े लोग। सरलता तो लुप्त हो जाती है। सफल वे लोग नहीं हैं जो एक नये विश्व का निर्माण कर रहे हैं। एक सच्चा

क्रान्तिकारी होने के लिए जो चीज जरूरी है वह है हृदय और मन का पूर्ण परिवर्तन, और वस्तुत: कितने थोड़े-से लोग ही स्वयं को मुक्त करना चाहते हैं! आदमी सतह पर की जड़ों को ही काटता रहता है; लेकिन सफलता और सामान्यता को पोषण देनेवाली गहरी जड़ों को काटने के लिए शब्द, दबाव और पद्धतियाँ काफी नहीं हैं। ऐसे लोग बहुत कम हैं जो वास्तविक निर्माणकर्त्ता है— बाकी लोग तो व्यर्थ का श्रम कर रहे हैं।

व्यक्ति सदा अपनी तुलना करता रहता है दूसरे के साथ, ऐसे व्यक्ति के साथ जो अधिक सौभाग्यशाली है, अथवा वह स्वयं अभी जो है और जो उसे होना चाहिए उनके बीच वह तुलना करता रहता है। यह तुलना सचमुच उसे मार डालती है। तुलना वस्तुत: अपमानजनक है, वह व्यक्ति की दृष्टि को विकृत कर देती है। तुलना के ही वातावरण में व्यक्ति का पालन-पोषण होता है। हमारी सारी शिक्षा उसी पर आधारित है और उसी प्रकार हमारी संस्कृति भी। अत: व्यक्ति जो है उससे अलग कुछ और होने के लिए अनवरत संघर्ष करता रहता है। जो हम हैं उसकी वास्तविक समझ सर्जनात्मकता को अपने आप प्रकट करती है, लेकिन तुलना वस्तुत: प्रतिस्पर्धा, निष्ठुरता और महत्वाकांक्षा को जन्म देती है और हमें लगता है कि यही चीजें प्रगति लाती हैं। यह प्रगति अब तक हमें जितने भयावह युद्धों और दुखों की ओर ले गयी वैसा संसार में पहले कभी नहीं हुआ था। बिना किसी तुलना के बच्चों का पालन-पोषण करना ही सच्ची शिक्षा है।

लिखने का यह काम भी अजीब लगता है, इतना अनावश्यक लगता है। जो चीज महत्त्वपूर्ण है वह तो यहाँ है और तुम वहाँ हो। यथार्थ की चीजें सदा एक समान होती हैं; उनके बारे में लिखना या बोलना बिल्कुल अनावश्यक है; लिखने या बोलने के क्रम में कुछ ऐसा घटित होता है जो उस यथार्थ को विकृत और व्यर्थ कर देता है। बहुत सारी चीजें ऐसी हैं जो उस यथार्थ से अलग हट कर कही जाती हैं। मनुष्य के भीतर परिपूर्ण होने की एक तीव्र आकांक्षा है जो छोटे और बड़े रूप से अनेक लोगों को जलाती है। इस आकांक्षा को किसी-न-किसी ढंग से तृप्त किया जा सकता है, और इस तृप्ति के साथ ही जो गहरी चीजें हैं वे लुप्त हो जाती हैं। अधिकतर स्थितियों में यही होता है, क्या ऐसा नहीं होता? इच्छा की पूर्ति बिल्कुल मामूली-सी बात है, चाहे वह कितनी ही सुखद हो; लेकिन वह इच्छा अपने आपको तृप्त किये चली जाती है, अत: उस इच्छापूर्ति के साथ ही जीवन में ऊब और बँधा-बँधाया नित्यक्रम आरंभ हो जाता है और जो यथार्थ चीज थी वह लुप्त हो जाती है। उस यथार्थ चीज को ही बना रहना चाहिए और तभी उसका चमत्कार होता है, वह स्वयं चमत्कार करती है— यदि वहाँ इच्छापूर्ति का कोई विचार न हो बल्कि चीजों को उसी रूप में केवल देखा जाये जिस तरह वे हैं।

हम शायद ही कभी एकाकी होते हैं। हम सदा लोगों के साथ रहते हैं, विचारों की भीड़ के साथ, उन आशाओं के साथ जो पूरी नहीं हुई या जो पूरी होने वाली हैं— अर्थात् हम यादों की दुनिया में रहते हैं। मनुष्य को अप्रभावित बने रहने के लिए एकाकी होना अत्यन्त आवश्यक

है, ताकि एक ऐसी चीज का जन्म हो सके जो अदूषित हो। इस एकाकीपन के लिए तो लगता है लोगों के पास समय ही नहीं है, करने के लिए इतनी सारी चीजें हैं, इतनी सारी जिम्मेदारियाँ हैं, इत्यादि। शान्त और मौन होना सीखना, एक कमरे में अपने आपको बन्द कर लेना, मन को विश्राम देना— ये चीजें एक आवश्यकता बन जाती हैं। प्रेम इस एकाकीपन का ही एक हिस्सा है। उस ज्योति को प्राप्त करने का अर्थ है सीधा, सरल, साफ और स्पष्ट होना तथा आन्तरिक रूप से शान्त होना।

सारी चीजें आसान नहीं होती लेकिन जीवन से जितना ही कोई व्यक्ति माँग करता है उतना ही जीवन भय और दुख से भर जाता है। हाँलाकि हर चीज और हर व्यक्ति प्रभावित करने की कोशिश कर रहा है परन्तु बिना प्रभावित हुए सरलतापूर्वक जीना तथा बदलती हुई मनः स्थितियों और माँगों से मुक्त होना आसान नहीं है। एक गहरे शान्त जीवन के बिना सारी चीजें निरर्थक हैं।

नीला आकाश कितना साफ है— अनन्त, कालातीत और अन्तरकाल-रहित। दूरी और अन्तरकाल मन की चीजें हैं; वहाँ और यहाँ तथ्य हैं, लेकिन इच्छा की प्रेरणा के साथ वे तथ्य मनोवैज्ञानिक तत्व बन जाते हैं। मन एक अद्भुत वस्तु है—इतना जटिल और फिर भी मूलतः इतना सरल। यह अनेक मनोवैज्ञानिक दबावों द्वारा जटिल बना दिया जाता है। और यही बात द्वन्द्व और दुख का कारण बन जाती है तथा विरोध एवं संग्रहवृत्ति उत्पन्न करती है। उनके प्रति सजग होना और उनमें उलझे बिना उन्हें गुजर जाने देना अत्यन्त कठिन है। जीवन एक बहती हुई

विशाल नदी के समान है। इस नदी की चीजों में से कुछ को मन अपने जाल में पकड़ लेता है और कुछ को छोड़ देता है। वहाँ कोई जाल होना ही नहीं चाहिए। जाल तो समय और अन्तराल का है, और यह जाल ही है जो 'यहाँ' और 'वहाँ' का तथा सुख एवं दुख का सृजन करता है।

अभिमान एक विचित्र चीज है, छोटी चीजों और बड़ी चीजों का अभिमान, अपनी मालकियत की वस्तुओं का अभिमान, अपनी उपलब्धियों का अभिमान, अपने गुणों का अभिमान; जाति, नाम और खानदान का अभिमान; अपने रूपरंग, ज्ञान और क्षमता का अभिमान। इन सारी चीजों द्वारा हम इस अभिमान का पोषण होने देते हैं, अथवा हम विनम्रता की ओर भागते हैं। अभिमान का विपरीत विनम्रता कदापि नहीं है— वह फिर भी अभिमान ही है, वह केवल कहने को विनम्रता है। विनम्र होने का एहसास अभिमान का ही एक रूप है। मन को कुछ-न-कुछ होना ही रहता है। यह अथवा वह होने के लिए मन संघर्ष करता रहता है, वह शून्यता की अवस्था में कभी नहीं रह सकता। यदि शून्यता का एक नया अनुभव है तो मन उस अनुभव की माँग करेगा ही— शान्त और शून्य होने का प्रयास भी एक और उपलब्धि ही है। मन को समस्त प्रयास से परे चला जाना चाहिए, तभी...।

हमारे दिन इतने सूने-सूने से हैं, वे हर तरह की गतिविधियों से भर दिए जाते हैं— काम-धन्धे, कल्पना-अनुमान, ध्यान, खुशियाँ और दुख। लेकिन इन सबके बावजूद हमारा जीवन सूना है। एक आदमी से

उसके पद, प्रतिष्ठा और प्रभाव का या उसके धन-दौलत का आवरण हटा कर उसे नंगा कर दीजिए और देखिए कि वह क्या है? वह सब उसका बाहरी दिखावा था, लेकिन आन्तरिक रूप से वह खाली और छिछला है। उसके पास दोनों चीजें एक साथ नहीं हो सकतीं— आन्तरिक सम्पदा और बाह्य सम्पदा। आन्तरिक पूर्णता बाह्य पूर्णता से कहीं महत्त्वपूर्ण है। 'बाह्य' को किसी व्यक्ति से छीना जा सकता है, बाहरी घटनाएँ उस चीज को चकनाचूर कर सकती हैं जिसे बहुत यत्न और सावधानी के साथ बाह्य रूप से बनाया गया है; लेकिन आन्तरिक सम्पदा अक्षय और अविनाशी है, कोई भी चीज उसका स्पर्श नहीं कर सकती, क्योंकि उसका निर्माण मन के द्वारा नहीं हुआ है।

तृप्त होने की आकांक्षा लोगों में अत्यंत बलवती होती है और वे किसी भी कीमत पर इस तृप्ति को पाने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। हर रूप में और हर दिशा में यह तृप्ति लोगों का पोषण करती है; यदि एक दिशा में तृप्ति नहीं मिल पाती तो लोग दूसरी दिशा में प्रयास करते हैं। लेकिन क्या तृप्ति जैसी कोई चीज होती है? तृप्ति एक तरह की परितुष्टि ला सकती है, लेकिन वह जल्दी ही विदा हो जाती है और हम पुनः अपनी खोज में लग जाते हैं। आकांक्षा को समझ लेने से तृप्ति की पूरी समस्या समाप्त हो जाती है। आकांक्षा का अर्थ है कुछ होने और बनने का प्रयास, और बनने की इस प्रक्रिया का अंत होते ही तृप्त होने के लिए किया जानेवाला संघर्ष भी लुप्त हो जाता है।

पर्वत एकाकी ही हो सकते हैं। पर्वतों पर वर्षा बड़ी ही प्यारी चीज होती होगी। वर्षा की बूँदें झील की शान्त सतह पर गिरती हैं। जब वर्षा होती है तो पृथ्वी से किस तरह गन्ध उठती है और तब बहुत सारे मेंढक भी टर्राने लगते हैं। उष्णकटिबंधी देशों (ट्रॉपिक्स) में जब वर्षा होती है तो वहाँ एक विलक्षण मोहक वातावरण होता है। हर चीज धुल कर साफ हो जाती है; पेड़-पौधों की पत्तों पर जमी धूल धुल जाती है, नदियाँ पुनः जीवित हो उठती हैं और बहते हुए जल का शोर सुनाई पड़ने लगता है। पेड़ों से हरी टहनियाँ और कोंपलें बाहर निकल आती हैं, जहाँ बंजर भूमि थी वहाँ नयी जंगली घास उग आती है, हजारों की संख्या में कीड़े-मकोड़े पता नहीं कहाँ से चले आते हैं, सूखी-तृप्त धरती की प्यास बुझ जाती है और पृथ्वी संतुष्ट एवं शान्त प्रतीत होती है। सूरज की किरणों से तीखापन चला गया-सा लगता है तथा पृथ्वी हरी-भरी हो जाती है और वह सुन्दरता एवं समृद्धि की एक जगह बन जाती है। मनुष्य तो अपने दुखों का निर्माण किये चला जाता है परन्तु पृथ्वी एक बार पुनः समृद्ध है और उसकी हवाओं में जादू-सा असर करनेवाला एक गुण आ जाता है।

यह विचित्र बात है कि इतने सारे लोग सम्मान और प्रशंसा चाहते हैं— एक महान कवि या दार्शनिक के रूप में सम्मानित होना, यानी कोई ऐसी चीज जो किसी व्यक्ति के अहंकार को बढ़ाती हो। यह अत्यधिक तुष्टि देता है लेकिन इसका कोई खास मतलब नहीं है। सम्मान पोषण देता है। मनुष्य के मिथ्याभिमान को और शायद उसकी जेब को भी,

और तब उसके बाद क्या? वह एक व्यक्ति को अलग कर देता है और यह अलगाव फिर अपनी समस्याएँ पैदा करता है, जो बढ़ता ही चला जाता है। हालाँकि सम्मान तुष्टि दे सकता है पर यह अपने आप में एक साध्य नहीं है। लेकिन अधिकांश लोग सम्मानित होने, परितुष्ट होने और उपलब्ध करने की लालसा में ही उलझे हुए हैं और तब असफलता अवश्यंभावी है तथा उसके साथ आने वाली दुख-तकलीफ भी। सफलता और असफलता दोनों से मुक्त होना ही यथार्थ चीज है। शुरू से ही किसी परिणाम की खोज नहीं करना, वही चीज करना जिसे करने मात्र से प्रेम हो, और प्रेम का कोई पुरस्कार या दंड नहीं होता। यदि प्रेम है तो यह वस्तुतः एक सरल चीज है।

हम अपने आसपास की चीजों की ओर कितना कम ध्यान देते हैं अर्थात् उनका अवलोकन करना और उन पर गम्भीरता से सोचना-विचारना। हम इतने स्वकेन्द्रित हैं तथा हम अपनी चिन्ताओं, अपने हितों और लाभों के साथ इतने व्यस्त हैं कि अवलोकन करने और समझने के लिए हमारे पास समय ही नहीं है। यह व्यस्तता हमारे मन को संवेदनशून्य, थका हुआ, कुंठित एवं दुखी बना देती है, और दुख से हम पलायन करना चाहते हैं। जब तक 'मैं' सक्रिय है तब तक यह थका देनेवाली संवेदनशून्यता और कुण्ठा रहेगी ही। लोग पागलपन की एक दौड़ में तथा स्वकेन्द्रित विवाद के दुख में फँसे हैं। यह दुख वस्तुतः गहरी विचारहीनता है। विचारशील और जागरूक लोग दुख से मुक्त होते हैं।

एक नदी कितनी प्यारी है। एक समृद्ध, विशाल, बहती हुई नदी के बिना कोई देश वस्तुतः देश है ही नहीं। एक नदी के किनारे बैठना तथा बहते हुए जल को देखना, मन्द लहरों को ध्यान से देखना तथा किनारों से टकराती हुई लहरों की छप-छप को सुनना; जल की सतह पर हवाओं द्वारा आकृतियों का बनना; अबाबील का जल को स्पर्श करना, कीट पतंगों का जल में फँस जाना; और बहुत दूर, जल के उस पार, नदी के दूसरे किनारे पर लोगों की आवाजें या किसी दिन सन्ध्या की नीरवता में एक बालक की बाँसुरी का स्वर— वह हमारे भीतर और बाहर के सारे शोरगुल को शान्त कर देता है। ऐसा लगता है कि जल, किसी-न-किसी प्रकार, शुद्ध और पवित्र कर देता है; बीते हुए कल की स्मृतियों को वह धो डालता है तथा हमारे मन को वह अपनी पवित्रता की गुणवत्ता प्रदान करता है— जैसा कि जल अपने आप में पवित्र होता है। एक नदी सब कुछ ग्रहण कर लेती है— गन्दे नाले, लाशें, अपने किनारों पर बसे शहरों की गंदगी, और फिर भी वह कुछ ही मीलों के अन्दर जाकर अपने आपको साफ कर लेती है। वह सब कुछ ग्रहण कर लेती है और स्वयं बनी रहती है, शुद्ध और अशुद्ध की परवाह किये बिना और उनकी भिन्नता को जाने बिना। वह तो तालाब और छोटे-छोटे डबरे होते हैं जो जल्दी ही दूषित हो जाते हैं, क्योंकि वे बहते हुए और जीवित नहीं होते, जैसे विशाल और सुगन्धित बहती हुई नदियाँ होती हैं। हमारा मन एक छोटा-सा तालाब ही है जो मूल्यांकन करता है, माप-तौल एवं विश्लेषण करता है, और फिर भी यह उत्तरदायित्व का एक छोटा-सा डबरा बना रहता है।

विचार की एक जड़ होती है या जड़ें होती है। विचार स्वयं ही जड़ है। प्रतिक्रिया तो होगी ही अन्यथा उसका अर्थ मृत्यु है, लेकिन समस्या यह है कि वह प्रतिक्रिया अपनी जड़ वर्तमान में या भविष्य में न फैलाये। विचार तो उठेगा ही, परन्तु उसके प्रति सजग होना और उसका तत्काल अन्त कर लेना अति आवश्यक है। विचार के बारे में सोचना, उसको परखना, उसके साथ खेलना— इन सबका अर्थ है विचार को विस्तार देना। यह समझ लेना सचमुच महत्त्वपूर्ण है। मन विचार के बारे में कैसे सोचता है यह देखना तथ्य के प्रति प्रतिक्रिया करना है। यह प्रतिक्रिया उदासी या कुछ और हो सकती है। उदास अनुभव करने लगना, भविष्य में होने वाले प्रतिलाभ के बारे में सोचने का अर्थ है अनिश्चितता की भूमि में जड़ें लगाना।

सचमुच एकाकी होना, बीते हुए कल की स्मृतियों और समस्याओं के साथ नहीं बल्कि एकाकी और आनन्दित होना, बिना किसी बाह्य या आन्तरिक बाध्यता के एकाकी होना— इनका अर्थ है मन को हस्तक्षेप से मुक्त रहने देना। एकाकी होना। एक वृक्ष के प्रति प्रेम की गुणवत्ता रखना— संरक्षात्मक और फिर भी एकाकी। हम वृक्षों के प्रति संवेदना खो रहे हैं, और इसीलिए हम मनुष्य के प्रति प्रेम खो रहे हैं। यदि हम प्रकृति से प्रेम नहीं कर सके, तो मनुष्य से भी प्रेम नहीं कर सकते। हमारा ईश्वर अत्यन्त छोटा और क्षुद्र हो गया है और वैसा ही है हमारा प्रेम भी। सामान्यता में ही सीमित है हमारा अस्तित्व, परन्तु दूसरी ओर है खुला आकाश, वृक्ष और पृथ्वी का अनन्त ऐश्वर्य।

तुम्हारे पास एक साफ और स्पष्ट मन होना चाहिए— एक बंधनरहित मुक्त मन। यह अनिवार्य है। यदि तुम्हारे पास किसी तरह का भय है तो तुम्हारे पास एक साफ, स्पष्ट और तीक्ष्ण मन नहीं हो सकता। भय मन को अवरुद्ध कर देता है। यदि मन अपनी स्वनिर्मित समस्याओं का सामना नहीं करता, तो यह एक साफ, स्पष्ट और गहरा मन नहीं है। मन की विचित्रताओं का सामना करना, इसकी अन्त:प्रेरणाओं और इसके आवेगों के प्रति सजग होना, गहराई से और आन्तरिक रूप से— इन सबको बिना किसी विरोध के स्वीकार करने का अर्थ है एक स्पष्ट और गहरा मन प्राप्त करना। तभी वहाँ एक सूक्ष्म मन हो सकता है, न कि ऐसा मन जो निष्कर्ष निकालने में, मूल्यांकन करने में या किसी चीज को प्रतिपादित करने में लगा है। यह सूक्ष्मता अत्यावश्यक है। इसे जानना चाहिए कि सुनना और प्रतीक्षा करना क्या है। गहरी चीजों के साथ खेलना भी। ऐसा नहीं है कि इसे अन्त में हासिल करना है, बल्कि मन की इस गुणवत्ता को शुरू से ही होना चाहिए। तुम्हारे पास यह हो सकती है, इसे प्रस्फुटित होने का गहरा और पूरा अवसर दो।

अज्ञात में जाना, कोई भी चीज आँख मूँद कर नहीं स्वीकार कर लेना, खोजबीन करने के लिए स्वतन्त्र होना— और इसी प्रक्रिया से गहराई एवं समझ हो सकती है। अन्यथा व्यक्ति सतह पर ही रहता है। जो चीज महत्त्वपूर्ण है वह किसी बात को सही या गलत साबित नहीं करती है बल्कि सत्य का पता लगाती है।

परिवर्तन की समस्त धारणा या परिवर्तन के सत्य को तभी देखा जाता है जब सिर्फ वही शेष रह जाता है 'जो है'। 'जो है' विचारकर्ता

से भिन्न नहीं है। विचारकर्ता वही है 'जो है'। विचारकर्ता इस चीज से अलग नहीं है 'जो है'।

जहाँ किसी प्रकार की कोई माँग है, किसी भावी स्थिति के लिए कोई आशा है वहाँ शान्ति में होना संभव नहीं है। दुख-सुख खुद-ब-खुद चले आते हैं जहाँ कोई माँग होती है। साधारणतया जीवन माँग से भरा है। एक भी माँग का होना अनन्त दुख की ओर ले जाता है। उस एक माँग से भी मन का स्वयं को मुक्त कर लेना या केवल इतना जानना कि एक भी आकांक्षा के लिए अवधान आवश्यक है— एक मुश्किल काम है। यदि उसका पता भी चले तो उसे एक समस्या मत बनने देना। किसी समस्या को जारी रखने का अर्थ है उसे जड़ पकड़ने देना। उसे जड़ पकड़ने मत दो। एक माँग ही एकमात्र दुख है। वह जीवन में अंधेरा कर देता है, वहाँ कुण्ठा और पीड़ा होती है। उसके प्रति केवल सजग होओ। उसके साथ सरल होओ।

इस इलाके से होकर एक जलधारा बहती है। बड़ी नदी की ओर धीरे-धीरे प्रवाहित होने वाला शान्त जल यह नहीं है, बल्कि यह एक शोर मचाने वाली प्रसन्न जलधारा है। आसपास का यह सारा ग्रामीण क्षेत्र पहाड़ी है, और इस जलधारा में अनेक जलप्रपात हैं। एक स्थान पर तो विभिन्न गहराइयों वाले तीन जलप्रपात हैं। ऊँचा वाला जलप्रपात सबसे अधिक शोर मचाता है, बाकी दो कोलाहलपूर्ण नहीं हैं बल्कि मीठी ध्वनि वाले हैं। ये तीनों जलप्रपात विभिन्न फासलों पर हैं, अत: वहाँ ध्वनि का

सतत स्पंदन है। उस संगीत को सुनने के लिए उस ओर ध्यान देना पड़ता है। फल के उद्यानों तथा खुले आकाश में वाद्यों का समूहवादन चल रहा है, संगीत वहाँ है। तुम्हें उसे खोज निकालना होगा, तुम्हें ध्यानपूर्वक सुनना होगा, उसके संगीत को सुन पाने के लिए तुम्हें बहते हुए जल के साथ होना होगा। उसे सुनने के लिए तुम्हें समग्र होना पड़ता है— आकाश, पृथ्वी, ऊँचे पेड़, हरे-भरे मैदान और बहता हुआ जल— तभी तुम उसे सुन पाती हो। लेकिन यह सब तो बहुत अधिक झंझट की बात है, तुम एक टिकट खरीद लेती हो और एक हाल में बैठ जाती हो, चारों ओर से लोगों द्वारा घिरे हुए, और वाद्य बजाये जाते हैं या कोई गाता है। सारा काम वे लोग ही करते हैं तुम्हारे लिए, कोई व्यक्ति गीत और संगीत की रचना करता है, दूसरा व्यक्ति बजाता या गाता है और तुम पैसे देती हो उसे सुनने के लिए। कुछ चीजों को छोड़कर जीवन में हर चीज उधार है, किसी और से लिया गया— ईश्वर, कविता, राजनीति, संगीत। अत: हमारा जीवन खाली-खाली-सा है, और इस खालीपन को हम भरने की कोशिश करते है— संगीत से, ईश्वर से, प्रेम से, विभिन्न प्रकार के पलायनों से, और यह भरना ही खाली करना है। लेकिन सौन्दर्य को खरीदा नहीं जाता। अत: बहुत थोड़े से लोग ही सौन्दर्य एवं अच्छाई चाहते हैं और मनुष्य दूसरों से प्राप्त की हुई चीजों से सन्तुष्ट हो जाता है। इन सबको दूर फेंक देना ही वास्तविक और एकमात्र क्रान्ति है, तभी वहाँ यथार्थ ही सर्जनात्मकता होती है।

यह विचित्र है कि मनुष्य सातत्य पर ही जोर देता है, सारी चीजों में-- सम्बन्धों में, परम्पराओं में, धर्म में, कला में। सातत्य को तोड़

डालना और पुनः एक नया आरम्भ करना जैसी चीज तो है ही नहीं। यदि मनुष्य के पास अनुकरण और अनुसरण करने के लिए कोई ग्रन्थ या नेता नहीं होता, कोई आदर्श नहीं होता, यदि वह बिल्कुल एकाकी होता, अपने समस्त ज्ञान के आवरण से वंचित होकर नग्न होता, तो उसे शुरू से ही प्रारम्भ करना होता। निश्चित ही, अपने ऊपर से इस आवरण को पूरी तरह हटाने का यह कार्य पूर्णतः सहज और स्वैच्छिक होना चाहिए, अन्यथा वह पागल हो जायेगा या वह स्वयं को एक तरह की विक्षिप्तता की स्थिति में डाल लेगा। जैसा कि थोड़े से लोग ही इस पूर्ण एकाकीपन का सामर्थ्य रखे हुए प्रतीत होते हैं, इस संसार का परम्परा के साथ चलते रहना जारी है— अपनी कला, अपना संगीत, अपनी राजनीति तथा अपने ईश्वर में— जो सदा दुख को जन्म देता है। वर्तमान समय में यही हो रहा है संसार में। यहाँ कुछ नया नहीं है, यहाँ केवल विरोध और प्रतिरोध और प्रतिविरोध है— आध्यात्मिक जगत् में भय और हठधर्म का नियम जारी है; कला के क्षेत्र में कुछ नया हासिल करने का प्रयास चल रहा है। परन्तु मन नया नहीं है; यह परम्परा, भय, ज्ञान और अनुभव से बोझिल वही पुराना मन है जो कुछ नया खोजने के लिए प्रयत्नशील है। यह मन ही है जिसे स्वयं को पूर्णतः निरावृत्त कर लेना चाहिए, ताकि एक नयी चीज का जन्म हो सके। यही वास्तविक क्रान्ति है।

दक्षिण दिशा से हवा बह रही है; काले बादल, वर्षा तथा हर चीज फूट कर बाहर निकल रही है तथा चारों ओर फैल रही है और अपने आपको नया जीवन दे रही है।

निकट के ही एक किसान के पास एक खूबसूरत खरगोश था जो अत्यन्त जीवन्त और फुर्तीला था। उसकी औरत उसके पास वह खरगोश ले आयी तथा दूसरी औरत ने कहा, 'मुझसे देखा नहीं जाता' और उस आदमी ने उसे मार डाला, और कुछ ही मिनट बाद वह जो जीवित था तथा जिसकी आँखों में एक रोशनी थी, उसकी खाल उन औरतों द्वारा उतारी जा रही थी। यहाँ पर लोग पशुओं की हत्या करने के अभ्यस्त हैं, जिस तरह संसार के अन्य जगहों के लोग हैं। धर्म उन्हें हत्या करने से मना नहीं करता। भारत में, कम-से-कम दक्षिण भारत में, जहाँ ब्राह्मण समुदाय में बच्चों को कहा जाता है कि हत्या मत करो, वहाँ हत्या करना कितना क्रूर है; बहुत सारे बच्चे हैं जो जब बड़े होते हैं तो परिस्थितियाँ उन्हें रातों-रात अपनी संस्कृति बदलने के लिए बाध्य कर देती हैं। वे माँस खाते हैं, वे मरने और मारने के लिए फौजी अफसर बन जाते हैं, रातों-रात उनके मूल्य बदल जाते हैं। सदियों-सदियों के एक विशेष सांस्कृतिक ढाँचे को गिरा दिया जाता है और एक नये ढाँचे को अपना लिया जाता है। किसी-न-किसी रूप में सुरक्षित होने की चाह इतनी प्रबल है कि मन ऐसे किसी भी ढाँचे के साथ अपना सामंजस्य कर लेता है जो उसे सुरक्षा और सुनिश्चितता दे सकता है। परन्तु सुरक्षा होती ही नहीं है; और जब कोई इसे वस्तुतः समझ लेता है तो वहाँ एक बिल्कुल ही भिन्न चीज होती है जो जीवन के अपने ही ढंग का निर्माण करती है। उस जीवन को समझा नहीं जा सकता या उसका अनुकरण नहीं किया जा सकता; ज्यादा-से-ज्यादा कोई इतना ही कर सकता है

कि सुरक्षा के ढंगों को समझे और उनके प्रति सजग हो, जो स्वयं अपनी ही मुक्ति को जन्म देता है।

पृथ्वी सुन्दर है और जितना अधिक तुम उसके प्रति सहज होती हो उतनी ही अधिक वह सुन्दर है। रंग, हरियाली और पीलेपन की विविधता। जब कोई व्यक्ति पृथ्वी के साथ एकाकी होता है तो उसे जो पता लगता है वह आश्चर्यजनक है। न केवल कीट-पतंग, पक्षी, घास, विभिन्न प्रकार के फूल, चट्टान, रंग और वृक्ष, बल्कि विचार भी, यदि कोई उन्हें प्रेम करता है। हम किसी चीज के साथ कभी एकाकी नहीं होते। न अपने साथ और न पृथ्वी के साथ। किसी आकांक्षा के साथ एकाकी होना आसान है, इच्छाशक्ति की किसी क्रिया द्वारा उसका विरोध करना नहीं, किसी भी क्रिया की ओर उसे भागने देना नहीं, उसकी पूर्ति होने देना भी नहीं, उसके समर्थन या उसकी निन्दा द्वारा उसके विपरीत का निर्माण करना नहीं; बल्कि उसके साथ एकाकी होना। यह एक अत्यन्त अद्भुत अवस्था को उत्पन्न करता है, बिना इच्छाशक्ति की किसी क्रिया द्वारा क्योंकि यही चीज विरोध और द्वन्द्व पैदा करती है। किसी आकांक्षा के साथ एकाकी होना ही उस आकांक्षा में एक रूपान्तरण ले आता है। उसके साथ खेलो और देखो कि क्या होता है; किसी चीज का दबाव मत डालो बल्कि सहजता से इस पर सोचो-विचारो।

शिक्षा? हम इससे क्या समझते हैं। हम पढ़ना और लिखना सीखते हैं, जीविका के लिए आवश्यक तकनीक प्राप्त करते हैं, और तब हम संसार में स्वतन्त्र छोड़ दिये जाते हैं। बचपन से ही हमें बताया

जाता है कि हम क्या करें, क्या सोचें, अत: आन्तरिक रूप से हम समाज और परिवेश के प्रभाव द्वारा गहरे रूप में संस्कारबद्ध हैं।

मैं सोच रहा था, क्या यह सम्भव है कि हम मनुष्य को बाह्य स्तर पर ही शिक्षित करें परन्तु उसके केन्द्र को स्वतन्त्र छोड़ दें? क्या हम मनुष्य की सहायता कर सकते हैं ताकि वह आन्तरिक रूप से स्वतन्त्र हो जाये तथा सदा स्वतन्त्र रहे? क्योंकि स्वतन्त्रता में ही वह सृजनात्मकता है और इसीलिए वह सुखी हो सकता है। अन्यथा जीवन एक अत्यन्त पेचीदा मामला है— भीतर का एक संग्राम और इसलिए बाहर का भी। लेकिन आन्तरिक रूप से स्वतन्त्र होने के लिए आश्चर्यजनक सावधानी और प्रज्ञा चाहिए; परन्तु थोड़े से लोग ही इसके महत्व को देखते हैं। हमारा लगाव बाह्य से ही है, सृजनात्मकता से नहीं। लेकिन इस सबको बदलने के लिए कम-से-कम कुछ लोग ऐसे जरूर होने चाहिए जो इसकी आवश्यकता को समझते हैं, जो स्वयं अपने भीतर इस स्वतन्त्रता को जन्म दे रहे हैं। यह एक विलक्षण जगत है।

जो चीज महत्त्वपूर्ण है वह है अचेतन में एक आमूल परिवर्तन। इच्छाशक्ति की कोई भी चेतन-क्रिया अचेतन को नहीं छू सकती। जैसाकि चेतन इच्छाशक्ति अचेतन लक्ष्यों, आकांक्षाओं और प्रेरणाओं को नहीं छू सकती, चेतन मन को अवश्य ही शान्त और निश्चल हो जाना चाहिए तथा किसी विशेष क्रिया-पद्धति के अनुसार अचेतन को बाध्य करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। अचेतन की एक अपनी क्रिया-पद्धति होती है, एक अपना ढाँचा होता है जिसके भीतर यह कार्य करता है। इस ढाँचे

को किसी बाहरी कृत्य द्वारा नहीं तोड़ा जा सकता, और इच्छाशक्ति एक बाहरी कृत्य है। यदि यह वस्तुतः देख और समझ लिया जाये तो बाहरी मन शान्त हो जाता है; और चूँकि इच्छाशक्ति द्वारा खड़ा किया गया कोई विरोध वहाँ नहीं होता इसलिए तुम पाते हो कि तथाकथित अचेतन स्वयं को अपनी सीमाओं से मुक्त करने लगता है। तभी मनुष्य के समग्र अस्तित्व में एक आमूल रूपान्तरण होता है।

गरिमा एक अत्यन्त दुर्लभ चीज है। सम्मान का एक पद या हैसियत गरिमा देती है। वह ऊपर से एक कोट पहनने जैसा है। वह कोट, वह ओहदा गरिमा देता है। लेकिन इन चीजों के आवरण को हटा कर आदमी को नंगा कर दिया जाये तो बहुत कम लोगों के पास ही गरिमा की एक ऐसी गुणवत्ता होती है जिसका आगमन कुछ नहीं होने की आन्तरिक स्वतन्त्रता के साथ होता है। कुछ होना ही वह चीज है जिसकी मनुष्य लालसा करता है और वह 'कुछ' उसे समाज में एक स्थान देता है जिसका कि समाज आदर करता है। एक आदमी को किसी प्रकार की श्रेणी में डाल दो— बुद्धिमान, धनवान, एक संत, एक भौतिकविद्; परन्तु यदि वह किसी भी श्रेणी में नहीं डाला जा सके जिसे कि समाज पहचानता हो, तो वह एक विचित्र व्यक्ति है। गरिमा धारण नहीं की जा सकती, विकसित नहीं की जा सकती, और अपने आपके गरिमापूर्ण होने के प्रति चेतन होने का अर्थ है स्वचेतन होना, जिसका अर्थ है क्षुद्र और छोटा होना। कुछ नहीं होने का अर्थ उस धारणा से ही मुक्त हो जाना।

होना— कोई खास चीज या खास स्थिति में नहीं— ही सच्ची गरिमा है। इसे छीना नहीं जा सकता, यह सदा है।

जीवन की धारा को उन्मुक्त रूप से प्रवाहित होने देना, बिना किसी अवशेष के छूटे हुए— यही वास्तविक सजगता है। मानव मन एक चलनी के समान है जो कुछ चीजों को पकड़ लेता है और बाकी चीजों को निकल जाने देता है। जो यह पकड़ता है वह इसकी अपनी आकांक्षाओं का आकार है; और आकांक्षाएँ चाहे कितनी ही गहरी, बड़ी और महान हों, वे छोटी हैं, क्षुद्र हैं, क्योंकि आकांक्षा मन की ही एक चीज है। रोक लेना नहीं, बल्कि नियंत्रण और चुनाव से मुक्त होकर बहते रहने के लिए अपने पास जीवन की स्वतन्त्रता का होना ही पूर्ण सजगता है। हम सदा पकड़ रहे हैं या चुन रहे हैं, उन चीजों को चुन रहे हैं जिनका महत्व है तथा उन्हें निरन्तर अपनी पकड़ में रखते हैं। इसी को हम अनुभव कहते हैं, और अनुभवों की वृद्धि को ही हम जीवन की समृद्धि कहते हैं। अनुभव के संचय से मुक्ति ही जीवन की समृद्धि है। अनुभव, जो कि शेष रह जाता है तथा जो कायम रखा जाता है, वह नहीं घटित होने देता है उस अवस्था को जिसमें कि 'ज्ञात' का लोप हो गया है। 'ज्ञात' कोई खजाना नहीं है, लेकिन मन उससे चिपका रहता है और इस तरह वह 'अज्ञात' को नष्ट या भ्रष्ट कर देता है।

जीवन एक विचित्र मामला है। वही आदमी सुखी है जो कुछ नहीं है।

हमलोग— हममें से अधिकांश लोग तो कम-से-कम अवश्य ही— विभिन्न मन:स्थिति और स्वभाव वाले प्राणी हैं। हममें से कुछ लोग तो इससे पलायन कर जाते हैं। कुछ लोगों को यह शारीरिक स्थिति के कारण होता है, कुछ लोगों के लिए यह एक मानसिक दशा है। हम उतार-चढ़ाव वाली इस दशा को पसन्द करते हैं, हम समझते हैं कि मन: स्थितियों की यह गति अस्तित्व का अंग है। अथवा हम एक मन:स्थिति से दूसरी मन:स्थिति की ओर बहते चले जाते हैं। थोड़े से लोग ही ऐसे हैं जो इस गति में नहीं फँसे हैं, जो कुछ बनने के संग्राम से मुक्त है, जिससे कि आन्तरिक रूप से वहाँ एक दृढ़ता है, इच्छाशक्ति द्वारा उत्पन्न नहीं बल्कि एक ऐसी दृढ़ता जो प्रयास द्वारा उत्पन्न नहीं है, न ही वह किसी एक चीज में केन्द्रित अभिरुचि द्वारा उत्पन्न है। ऐसी दृढ़ता इनमें से किसी भी गतिविधि का परिणाम नहीं है। यह हमारे पास अनायास आ जाती है जब इच्छाशक्ति की क्रिया का विलय हो जाता है।

रुपया-पैसा लोगों को बिगाड़ देता है। समृद्ध लोगों का एक विशिष्ट अहंकार होता है। कुछ अपवादों को छोड़कर, हर देश में, समृद्ध लोगों के पास एक विशिष्ट वातावरण होता है जिसमें कि वे किसी भी चीज को तोड़-मरोड़ पाते हैं, ईश्वर को भी; वे अपने ईश्वर को भी खरीद सकते हैं। समृद्धि का अर्थ केवल धन-सम्पत्ति नहीं है बल्कि अनेक सारी चीजों को कर पाने का सामर्थ्य भी। सामर्थ्य मनुष्य को स्वतन्त्रता का एक विचित्र बोध देता है। वह यह भी महसूस करने लगता है कि वह दूसरों से ऊपर है, वह भिन्न है। यह सब उसे एक बड़प्पन का बोध देता है; वह आराम से बैठकर दूसरों को तड़पते हुए देखता है; वह अपने

ही अज्ञान से तथा अपने ही मन के अंधकार से अनजान बना रहता है। इस अंधकार से पलायन करने के लिए रुपया-पैसा और सामर्थ्य एक अच्छा साधन प्रस्तुत करते हैं। आखिर पलायन भी प्रतिरोध का ही एक रूप है, जो अपनी ही समस्याएँ पैदा करता है। जीवन एक विचित्र व्यापार है। वही आदमी सुखी है जो कुछ नहीं है।

चीजों को सहजता से लो, लेकिन आन्तरिक रूप से समग्रता और सतर्कता के साथ। तुम्हारे भीतर और बाहर जो कुछ हो रहा है उसके प्रति पूर्णत: सजग हुए बिना एक भी क्षण को बचकर निकलने न दो। प्राय: सचेत रहना ही वह चीज है जिसका अर्थ है संवेदनशील होना, एक या दो चीजों के प्रति ही नहीं, बल्कि हर चीज के प्रति संवेदनशील होना। सौन्दर्य के प्रति संवेदनशील होना तथा कुरूपता का प्रतिरोध करना— इसका अर्थ है द्वन्द्व उत्पन्न करना। तुम्हें पता है कि जैसे ही तुम ध्यान से निरीक्षण करती हो तुम देखती हो कि मन हर समय मूल्यांकन करता रहता है— यह अच्छा है और वह बुरा है, यह काला है और वह उजला है— लोगों का मूल्यांकन करना, तुलना करना, तौलना, अनुमान लगाना। मन सदा अशान्त रहता है। क्या मन बिना मूल्यांकन और अनुमान करते हुए निरीक्षण तथा अवलोकन कर सकता है? बिना नाम देते हुए प्रत्यक्ष रूप से देखो और सिर्फ पता लगाओ कि मन ऐसा कर सकता है या नहीं।

इसके साथ खेलो। इसे अपने ऊपर लादो मत, इसे स्वयं को देखने दो। अधिकांश व्यक्ति जो सरल होने का प्रयास करते हैं वे बाह्य से प्रारम्भ

करते हैं, हटाते हुए, परित्याग करते हुए, आदि; परन्तु आन्तरिक रूप से उनके अस्तित्व की जटिलता बनी रहती है। आन्तरिक सरलता के आते ही बाह्य अभ्यन्तर के अनुरूप हो जाता है। आन्तरिक रूप से सरल होने का अर्थ है 'अधिक' की लालसा से मुक्त हो जाना, जिसका अर्थ जो है उससे सन्तुष्ट हो जाना नहीं है। 'अधिक' की लालसा से मुक्त होने का अर्थ है— समय, प्रगति, कहीं पहुँचने की भाषा में नहीं सोचना। सरल होने का अर्थ है मन का स्वयं को सभी परिणामों से मुक्त कर लेना तथा मन का स्वयं को समस्त द्वन्द्व से खाली कर लेना। यही वास्तविक सरलता है।

कुरूप और सुन्दर के बीच मन युद्ध कैसे कर सकता है, एक से चिपकते हुए तथा दूसरे को दूर हटाते हुए। यह द्वन्द्व मन को असंवेदनशील और एकांतिक बना देता है। उन दोनों के बीच अपरिभाषित रेखा को ढूँढ़ने के लिए मन का कोई भी प्रयास उन्हीं दोनों में से किसी एक का हिस्सा है। विचार चाहे जो कुछ करे, परन्तु वह स्वयं को विपरीतों से मुक्त नहीं कर सकता; विचार ने ही स्वयं कुरूप और सुन्दर का तथा अच्छे और बुरे का सृजन किया है। अतः वह अपने ही क्रियाकलाप से स्वयं को मुक्त नहीं कर सकता। अधिक-से-अधिक वह इतना ही कर सकता है कि वह निश्चल हो जाये, वह चुनाव न करे। चुनाव द्वन्द्व है और इस तरह मन अपने ही उलझनों के जाल में पुनः वापस चला आता है। मन की निश्चलता द्वैत से मुक्ति है।

चारों ओर इतना अधिक असंतोष है और व्यक्ति यह समझता है कि विचारधारा ही, साम्यवाद या अन्य विचारधारा, हर चीज का समाधान करने जा रही है, असंतोष को भी दूर करने जा रही है, जो निश्चय वह कदापि नहीं कर सकती। साम्यवाद या कोई संगठित धार्मिक संस्कार असंतोष को समाप्त नहीं कर सकता; लेकिन इसको दबाने के लिए, इसको व्यवस्थित करने के लिए तथा इसे संतोष का रूप देने के लिए व्यक्ति हर उपाय का सहारा लेता है परन्तु यह सदा वहाँ मौजूद रहता है। व्यक्ति सोचता है कि असंतुष्ट होना गलत है, सामान्यत: ठीक नहीं है, और फिर भी वह इसे समाप्त नहीं कर सकता। इसको समझना होगा। समझने का अर्थ है निन्दा नहीं करना। इसीलिए वस्तुत: इसकी जाँच-पड़ताल करो; इसको बदलने की या इसे कोई और मार्ग देने की इच्छा के बिना इसे ध्यान से देखो। दिन के समय जब यह सक्रिय रहता है इसके प्रति सजग रहो, इसके ढंगों को देखो और इसके साथ एकाकी हो जाओ।

स्वतन्त्रता तभी आती है जब मन एकाकी होता है। इसकी अनुभूति के लिए ही सही, मन को निश्चल रखो, समस्त विचार से मुक्त। इसके साथ खेलो, इसे एक बहुत गम्भीर मामला मत बनाओ, बिना किसी संघर्ष के सजग रहो तथा मन को निश्चल होने दो।

जब तक व्यक्ति इच्छापूर्ति के लिए प्रयत्नशील रहता है तब तक कुण्ठा मौजूद रहती है। इच्छापूर्ति का सुख एक निरन्तर माँग है और हम उस सुख के सातत्य को चाहते हैं। उस सुख का अन्त हो जाना ही कुण्ठा

है जिसमें पीड़ा निहित है। मन विभिन्न दिशाओं में पुनः इच्छापूर्ति की खोज करने लगता है और पुनः कुण्ठा से ही उसका सामना होता है। यह कुण्ठा स्वचेतनता की गति है जो पृथकता, अलगाव और अकेलापन है। इससे दूर जाकर मन पुनः किसी-न-किसी प्रकार की इच्छापूर्ति की ओर पलायन करना चाहता है। इच्छापूर्ति करने का संघर्ष द्वैत के द्वन्द्व को जन्म देता है। मन जब उस इच्छापूर्ति की व्यर्थता या सत्य को देख लेता है जिसमें सदा कुण्ठा मौजूद रहती है तभी मन अकेलेपन की उस अवस्था में हो सकता है जिससे पलायन नहीं होता। बिना किसी पलायन के, जब मन अकेलेपन की उस अवस्था में होता है तभी उससे मुक्ति मिलती है। इच्छापूर्ति करने की चाह के कारण ही अलगाव का अस्तित्व है; कुण्ठा ही अलगाव है।

अब किसी तरह का कोई भी सदमा नहीं पहुँचना चाहिए, यहाँ तक कि क्षणिक रूप से भी नहीं। ये मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाएँ शरीर को प्रभावित करती हैं— अपने प्रतिकूल प्रभावों से। आन्तरिक रूप से अत्यन्त मजबूत होओ। दृढ़ और स्पष्ट होओ। समग्र होओ; समग्र होने की कोशिश मत करो, समग्र होओ। किसी व्यक्ति या वस्तु पर अथवा किसी अनुभव या स्मृति पर निर्भर मत रहो; अतीत चाहे कितना ही सुखद हो उस पर निर्भरता वर्तमान की समग्रता को बाधा ही पहुँचाती है। सजग होओ और उस सजगता को अक्षुण्ण और अखंडित रहने दो— भले ही वह एक मिनट के लिए हो।

नींद अत्यावश्यक है; नींद के दौरान व्यक्ति अज्ञात गहराइयों को छूते हुए जान पड़ता है, ऐसी गहराइयाँ जिनका स्पर्श या अनुभव चेतन

मन कभी नहीं कर सकता। चेतन और अचेतन से परे जगत के उस असाधारण अनुभव को भले ही कोई याद न रख सके लेकिन मन की पूरी चेतना पर उसका प्रभाव पड़ता है। शायद यह बात बहुत स्पष्ट नहीं है, लेकिन इसे केवल पढ़ो और इसके साथ खेलो। मुझे लगता है कि कुछ चीजें ऐसी हैं जिन्हें स्पष्ट कभी नहीं किया जा सकता। उसके लिए कोई उपयुक्त शब्द नहीं होते, लेकिन तो भी वे हैं।

विशेषकर तुम्हारे साथ यह महत्त्वपूर्ण है— एक ऐसा शरीर प्राप्त करना जो किसी बीमारी का शिकार न होने पाये। तुम्हें सहजता से और स्वेच्छा से सभी सुखद स्मृतियों और प्रतिमाओं को अलग रख देना चाहिए, ताकि तुम्हारा मन यथार्थ चीज के लिए स्वतन्त्र और अदूषित हो। जो लिख दिया गया है उस पर कृपया जरूर ध्यान देना। हर दिन और हर मिनट जैसे ही कोई अनुभव या विचार जगे उसका अन्त हो जाना चाहिए, ताकि मन जड़ों को भविष्य में न फैलाने पाये। यह वस्तुत: महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यही सच्ची स्वतन्त्रता है। इस प्रकार वहाँ निर्भरता नहीं होती, क्योंकि निर्भरता दुख लाती है जो शरीर को प्रभावित करता है तथा मनोवैज्ञानिक प्रतिरोध को उत्पन्न करता है। जैसा कि तुमने कहा, प्रतिरोध समस्याएँ पैदा करता है— हासिल करना, पूर्ण बनना इत्यादि। खोजने में निहित है— संघर्ष, चेष्टा, प्रयास; इस प्रयास और संघर्ष का अंत सदा कुण्ठा में होता है— मैं कुछ चाहता हूँ या मैं कुछ होना चाहता हूँ— वहाँ पहुँचने की प्रक्रिया में ही 'अधिक' की लालसा है और 'अधिक' कभी नजर नहीं आता, इसलिए वहाँ सदा विफल हो जाने का

एक बोध रहता है। अतः वहाँ दुख है। इसलिए व्यक्ति एक बार पुनः किसी और तरह की इच्छापूर्ति की ओर मुड़ता है, जिसका अवश्यंभावी रूप से वही परिणाम होता है। संघर्ष और प्रयास का निहितार्थ व्यापक है, और व्यक्ति आखिर क्यों खोजता रहता है? मन सदा क्यों खोजता रहता है और कौन-सी चीज इसे खोजने के लिए बाध्य करती है? क्या तुम जानती हो, क्या तुम्हें इस बात का बोध है कि तुम खोज रही हो? यदि है, तो तुम्हें पता होगा कि तुम्हारी खोज की वस्तु समय-समय पर बदलती रहती है। खोज और उससे जुड़ी उसकी कुण्ठाओं और पीड़ाओं के अन्तर को क्या तुम देखती हो? यह भी कि बहुत तुष्टि देनेवाली किसी चीज की प्राप्ति में ठहराव है जिससे जुड़ा है उसका सुख और भय तथा उसकी प्रगति और बनने की प्रक्रिया भी? यदि तुम्हें इसका बोध है कि तुम खोज रही हो, तो क्या मन के लिए यह संभव है कि वह खोज न करे? और यदि मन खोज न करे, तो खोज न करनेवाला इस तरह के मन की तत्क्षण वास्तविक प्रतिक्रिया क्या होती है?

इसके साथ खेलो, पता लगाओ; कोई भी चीज अपने ऊपर मत लादो, मन को अपने आपको किसी विशेष अनुभव की ओर बाध्य मत करने दो, क्योंकि तब यह अपने लिए भ्रम पैदा कर लेगा।

मैं किसी व्यक्ति से मिला जो मर रहा है। हम मृत्यु से कितने भयभीत हैं; हम जिससे भयभीत हैं वह है जीना; हम नहीं जानते कि कैसे जीयें; हम दुख को जानते हैं और मृत्यु ही अंतिम दुख है। जीने और मरने के रूप में हम जीवन को विभाजित कर देते हैं। तब वहाँ मृत्यु का दर्द तो होगा ही और उससे जुड़े अलगाव, अकेलापन और

पृथकता का दर्द भी। जीवन और मृत्यु एक ही गति है, पृथक अवस्थाएँ नहीं। जीना ही मरना है, हर चीज के प्रति मर जाना— प्रतिदिन पुनर्जीवित होने के लिए। यह कोई सैद्धान्तिक वक्तव्य नहीं है बल्कि यह जीने और अनुभव करने की चीज है। इच्छाशक्ति तथा कुछ होने की सतत आकांक्षा ही वह चीज है जो 'होने' की सरलता को पूर्णत: नष्ट कर देती है। यह 'होना' तृप्ति और इच्छापूर्ति की नींद से या तर्क के निष्कर्षों से पूर्णत: भिन्न है। इस 'होना' को मैं का बोध नहीं है। कोई मादक द्रव्य, कोई दिलचस्पी, किसी चीज में तल्लीनता या किसी चीज के साथ पूर्ण तादात्म्य एक वांछित अवस्था ला सकता है, जो वस्तुत: स्वचेतना ही है। 'होने' की वास्तविक अवस्था का अर्थ है इच्छाशक्ति का अन्त हो जाना। इन विचारों के साथ खेलो और खुशी से परीक्षण करो।

प्रात:काल का समय है और आज की सुबह बादलों से मुक्त है; आकाश अत्यन्त साफ, सौम्य और नीला है। सभी बादल चले गये मालूम पड़ते हैं, लेकिन वे दिन के समय फिर आ सकते हैं। इस सर्दी, इस हवा और इस वर्षा के बाद वसंत पुन: फूट पड़ेगा; ठण्डी हवाओं के बावजूद वसंत हलके-हलके चलता रहा है, लेकिन अब हर पत्ती और कली आनन्द मनायेगी। पृथ्वी एक कैसी प्यारी चीज है! कितनी सुन्दर हैं इससे निकलने वाली चीजें— चट्टान, जलधाराएँ, पेड़, घास, फूल तथा पृथ्वी द्वारा उत्पन्न अनन्त चीजें— केवल मनुष्य दुखी होता है, सिर्फ वही अपनी जाति (मनुष्यजाति) का विनाश करता है, सिर्फ वही अपने पड़ोसी का

शोषण करता है, वह अत्याचार करता है और विनाश करता है। वह सबसे अधिक अप्रसन्न और दुखी है, वह सबसे अधिक आविष्कारशील एवं देश और काल का विजेता है। परन्तु अपनी समस्त क्षमताओं के साथ तथा अपने सुन्दर मन्दिरों, मस्जिदों और गिरजाघरों के बावजूद वह स्वयं अपने ही अन्धकार में जीता है। उसके ईश्वर उसके अपने ही भय हैं तथा उसका प्रेम उसकी अपनी ही घृणाएँ है। हम इस संसार को एक कैसी अद्भुत जगह बना सकते हैं— बिना इन युद्धों के तथा बिना भय के! लेकिन अनुमान करने से आखिर फायदा ही क्या है?

असली चीज तो मनुष्य का असन्तोष है, अवश्यम्भावी असंतोष। यह एक बहुमूल्य चीज है— अत्यधिक मूल्य का एक रत्न। लेकिन व्यक्ति इससे भयभीत है, वह इसका अपव्यय और दुरुपयोग करता है या फलों की प्राप्ति के लिए ही वह इसका उपयोग होने देता है। मनुष्य इससे डरता है, लेकिन यह एक अमूल्य रत्न है, बिना मूल्य का। इसके साथ जीओ, इसकी गतिविधि के साथ हस्तक्षेप न करते हुए, इसे दिन-प्रति-दिन ध्यान से देखो। तब यह उस लौ और लपट की तरह है जो सभी कचरे को जला कर राख कर देती है, और वही चीज शेष रह जाती है जिसका कोई घर नहीं है तथा जो असीम-अनन्त है। इस सबको प्रज्ञापूर्वक पढ़ो।

धनी आदमी के पास आवश्यकता से अधिक है और गरीब आदमी भूखा रहता है तथा भोजन की तलाश में जीवन भर काम करता रहता है और संघर्ष करता रहता है। जिसके पास कुछ नहीं है वह जीवन को

समृद्ध एवं सृजनात्मक बनाता है या बनने देता है, और दूसरा आदमी जिसके पास संसार की सारी चीजें हैं वह अपव्यय करता है और मुरझा जाता है। एक आदमी को जमीन का एक टुकड़ा दे दीजिए, वह इसे सुन्दर और उपजाऊ बनाता है, तथा दूसरा आदमी उसी की उपेक्षा करता है और उसे मरने देता है, जैसे वह खुद मर जाता है। हर दिशा में, हमारे पास ऐसी असीम क्षमताएँ हैं— जो चीज नाम से परे है उसे पाने के लिए या पृथ्वी पर नरक लाने के लिए। लेकिन किसी तरह, आदमी घृणा और शत्रुता पैदा करना ही ज्यादा पसंद करता है। घृणा करना और ईर्ष्यालु होना इतना आसान है, और जैसा कि समाज 'अधिक' की माँग पर ही आधारित है, मानव हर प्रकार की संग्रहवृत्ति का शिकार हो जाता है। और इसलिए वहाँ अनवरत संघर्ष है, जिसे उचित ठहराया जाता है तथा जिसे गौरवपूर्ण बनाया जाता है।

असीमित समृद्धि वाला एक ऐसा जीवन भी है जिसमें संघर्ष, इच्छाशक्ति या चुनाव नहीं है। लेकिन वह जीवन असंभव और कठिन है यदि हमारी पूरी संस्कृति संघर्ष और इच्छाशक्ति की क्रिया का ही परिणाम है। इच्छाशक्ति की क्रिया के बिना, लगभग हर जीवित व्यक्ति के लिए, मृत्यु है। किसी-न-किसी तरह की महत्वाकांक्षा के बिना, लगभग हर व्यक्ति के लिए, जीवन का कोई अर्थ नहीं है।

चुनाव के बिना और इच्छाशक्ति के बिना भी एक जीवन है। उस जीवन का जन्म तभी होता है जब इच्छाशक्ति का अंत हो जाता है। मैं आशा करता हूँ कि यह सब पढ़ना तुम्हें नापसंद नहीं है; यदि नापसंद नहीं है तो इसे पढ़ो और खुशी से इसे ध्यानपूर्वक सुनो।

सूरज बादलों को चीर कर प्रकट होने की कोशिश कर रहा है, संभवत: दिन में किसी समय वह प्रकट हो पायेगा। एक दिन वसंत है और अगले दिन लगभग जाड़ा। मौसम मनुष्य की मन:स्थितियों का प्रतीक है। उतार-चढ़ाव, अंधकार और अस्थायी प्रकाश। तुम्हें पता ही है, यह कितना विचित्र है कि हम चाहते हैं स्वतन्त्रता और हम सब काम करते हैं स्वयं को गुलाम बनाने के लिए। हम अपनी समस्त पहलशक्ति खो देते हैं। हम दूसरों पर निर्भर रहते हैं ताकि वे हमारा मार्गदर्शन और हमारी सहायता करें, ताकि हम उदार हों तथा शान्तिपूर्ण हों; हम गुरुओं, उपदेशकों, उद्धारकों एवं ध्यानियों पर निर्भर रहते हैं। कोई व्यक्ति महान संगीत की रचना करता है, कोई व्यक्ति अपने ही ढंग से उसकी व्याख्या करते हुए उसे बजाता है और हम उसे सुनते हैं— उसका आनन्द लेते हुए या उसकी आलोचना करते हुए। हम ऐसे श्रोता और दर्शक हैं जो अभिनेताओं को, फुटबाल खिलाड़ियों को या सिनेमा के परदे को ही देखते रहते हैं। दूसरे कविताएँ लिखते हैं और हम पढ़ते हैं, दूसरे चित्र बनाते हैं और हम मुँह फाड़कर उन्हें देखते हैं। हमारे पास कुछ नहीं है, अत: हम दूसरों के भरोसे बैठे रहते हैं ताकि वे हमारा मनोरंजन करें, हमें प्रेरित करें, हमारा मार्गदर्शन करें या हमें बचायें। आधुनिक सभ्यता हमें अत्यधिक रूप से बरबाद कर रही है, सारी सृजनात्मकता हमसे छीन रही है। हम स्वयं आन्तरिक रूप से खाली हैं और सम्पन्न होने के लिए हम दूसरों पर निर्भर रहते हैं, इसलिए हमारे पड़ोसी शोषण करने के लिए इसका लाभ उठाते हैं, या हम उनका लाभ उठाते हैं।

दूसरों पर निर्भर होने में जो अनेक बातें अन्तर्निहित हैं उनके प्रति

जब कोई व्यक्ति सजग हो जाता है तो वह स्वतन्त्रता ही सृजनात्मकता का आरम्भ है। वह स्वतन्त्रता सच्ची क्रान्ति है— आर्थिक या सामाजिक सामंजस्य की झूठी क्रान्ति नहीं, ऐसी क्रान्ति तो गुलामी का ही दूसरा रूप है।

हमारा मन सुरक्षा का छोटा-छोटा किला बना लेता है। हम हर चीज के बारे में सुनिश्चित होना चाहते हैं— अपने सम्बन्धों के बारे में सुनिश्चित या अपनी आशाओं, इच्छाओं की पूर्ति तथा भविष्य के बारे में सुनिश्चित। हम इन आन्तरिक कारागृहों का निर्माण कर लेते हैं और जो व्यक्ति हमें विघ्न पहुँचाता है उसे कोसते हैं। यह विचित्र है कि किस तरह मन सदा एक ऐसे क्षेत्र की खोज में रहता है जहाँ कोई द्वन्द्व और कोई विघ्न न हो। सुरक्षा के इन क्षेत्रों का, विभिन्न रूपों में, सतत विघटन और पुनर्निर्माण ही हमारी जीवन-प्रक्रिया है। हमारा मन तब एक संवेदनशून्य और बोझिल वस्तु बन जाता है। किसी तरह की कोई भी सुरक्षा न रखने में ही स्वतन्त्रता है।

विचार की लहरों से पूर्णत: मुक्त एक निश्चल और अत्यन्त शान्त मन का होना वस्तुत: आश्चर्यजनक है। एक मृत मन की निश्चलता नि: संदेह शान्त मन नहीं है। इच्छाशक्ति की क्रिया द्वारा भी मन को निश्चल होने के लिए प्रेरित किया जाता है। लेकिन क्या यह कभी गहरे रूप से, अपने सम्पूर्ण अस्तित्व से ही मौन हो सकता है? जब मन इस प्रकार मौन हो जाता है तब जो घटित होता है वह सचमुच कितना विस्मयकारी है! उस अवस्था में जानने और पहचानने की क्रिया के रूप में सम्पूर्ण

चेतना का अन्त हो जाता है। मन, अर्थात् स्मृति की नैसर्गिक वृत्तिजनित खोज, का भी अन्त हो चुका होता है। और यह अत्यन्त रोचक है कि किस तरह मन सोचने, शब्दों में अभिव्यक्त करने तथा प्रतीकों का परिष्कार करने के द्वारा उस शब्दातीत अवस्था को अपने अधिकार में करने की भरसक कोशिश करने लगता है। लेकिन इस प्रक्रिया का सहज और स्वाभाविक रूप से अन्त होना वस्तुत: हर चीज के प्रति मर जाने के समान है। हम मरना नहीं चाहते, और इसलिए एक अचेतन संघर्ष सदा चलता रहता है, और इसी संघर्ष को जीवन कहा जाता है। यह विलक्षण है कि किस तरह अधिकांश लोग दूसरों को प्रभावित करना चाहते हैं, अपनी उपलब्धियों द्वारा, अपनी चतुराई द्वारा, अपनी पुस्तकों द्वारा— प्रभाव डालने के लिए किसी भी उपाय द्वारा।

सब कुछ कैसा है? क्या तुम्हारे दिन एक जुलाहे के करघे से अधिक तेज हैं? क्या तुम एक दिन में एक हजार वर्ष जीती हो? यह अजीब है कि अधिकांश लोगों के लिए ऊब एक वास्तविक चीज है; वे कुछ-न-कुछ करते रहते हैं, वे लिप्त रहते हैं किसी-न-किसी चीज के साथ— किसी गतिविधि के साथ, किसी पुस्तक के साथ, रसोई घर के साथ, बच्चों के साथ या ईश्वर के साथ। अन्यथा वे अपने साथ होते हैं, जो कि अत्यन्त ऊबाऊ है। जब वे अपने साथ होते हैं तो वे स्वकेन्द्रित और जटिल हो जाते हैं अथवा बीमार और चिड़चिड़े हो जाते हैं। एक निर्लिप्त मन— एक नकारात्मक खाली मन नहीं बल्कि एक सतर्क निश्चल मन, एक पूर्णत: शून्य मन— एक प्यारी चीज है, अनन्त संभावनाओं

का सामर्थ्य रखनेवाली। विचार थकानेवाले होते हैं— असृजनात्मक और असंवेदनशील भी। कोई विचार चतुर हो सकता है, लेकिन चतुराई एक तेज औजार की तरह है— वह जल्दी ही अपने आपको घिस कर नष्ट कर लेता है, और यही कारण है कि चतुर व्यक्ति असंवेदनशील होते हैं।

अपने पास एक निर्लिप्त मन को होने दो— बिना इसके लिए जानबूझकर प्रयत्नशील हुए। इसे परिष्कृत करने के बदले इसे स्वयं घटित होने दो। इसे सजगता के साथ पढ़ो और इसे घटित होने दो। निर्लिप्त मन के बारे में सुनना या पढ़ना महत्त्वपूर्ण है— और यह भी तुम कैसे पढ़ती हो और कैसे सुनती हो।

जो चीज महत्त्वपूर्ण है वह है सही प्रकार का व्यायाम, अच्छी नींद, और एक ऐसा दिन जिसकी सार्थकता हो। लेकिन आदमी बहुत आसानी से एक बँधी-बँधायी दिनचर्या में उलझ जाता है, और तब वह आत्मतुष्टि के आरामदेह ढाँचे में या स्वारोपित धर्मपरायणता के ढाँचे में कार्य करने लगता है। ये सारे ढाँचे निरपवाद रूप से मृत्यु की ओर ले जाते हैं— धीरे-धीरे सूख जाने की ओर। लेकिन अपने पास एक ऐसा समृद्ध दिन होना, जिसमें कोई बाध्यता, कोई भय, कोई तुलना और कोई द्वन्द्व न हो बल्कि केवल सजग होने की अवस्था हो— उसका अर्थ है सर्जनात्मक होना।

तुम देख सकती हो कि ऐसे क्षण विरले ही होते हैं जब हम इसे अनुभव करते हैं, वस्तुतः हमारे जीवन का अधिकांश भाग क्षय होनेवाली

स्मृतियों, कुण्ठाओं तथा निरर्थक प्रयासों से ही मिलकर बना है, और वास्तविक चीज लुप्त हो जाती है। इस बादल को बेध कर उस पार जाना तथा प्रकाश की सहज-स्वाभाविक स्पष्टता में होना सचमुच ही बहुत कठिन है। इन सबको केवल देखो। बस इतना ही। सरल होने का प्रयास मत करो। यह प्रयास करना केवल जटिलता और दुख उत्पन्न करता है। प्रयास करना ही 'बनना' है और बनने का सदा अर्थ है आकांक्षा और उससे जुड़ी कुण्ठाएँ।

स्वयं को समस्त भावात्मक और मनोवैज्ञानिक आघात से मुक्त कर लेना कितना महत्त्वपूर्ण है, जिसका अर्थ यह नहीं है कि जीवन के स्पन्दन के विरुद्ध कोई अपने आपको कठोर बना ले। यही वे आघात हैं जो ऐसे विभिन्न मनोवैज्ञानिक प्रतिरोधों का धीरे-धीरे निर्माण करते हैं जो शरीर को भी प्रभावित करते हैं— विभिन्न प्रकार की बीमारियों को लाते हुए। जीवन वांछित और अवांछित घटनाओं की शृंखला है और जब तक हम इनमें चुनाव करते रहेंगे तब तक द्वन्द्व बना रहेगा और आघात भी। चुनाव की यह प्रक्रिया मन और हृदय को कठोर बना देती है, यह एक घेरे के अन्दर स्वयं को बन्द कर लेने की प्रक्रिया है और इसलिए वहाँ दुखभोग है। जीवन की गति को चलने देना, बिना चुनाव के, बिना किसी विशेष गति के, वांछनीय या अवांछनीय तथा यह गहराई तक पहुँचे— इसके लिए आवश्यक है अतिशय सजगता। यह हर समय सजग होने का प्रयास करने की बात नहीं है, जो कि थकाऊ है, बल्कि सजगता के सत्य की आवश्यकता को देखना, तब तुम देखोगी कि वह

आवश्यकता ही कार्य करने लगती है— बिना तुम्हारे स्वयं को सजग होने के लिए बाध्य करने के।

कोई व्यक्ति भ्रमण कर सकता है, विश्व के विभिन्न हिस्सों में अच्छे-से-अच्छे स्कूलों में शिक्षा प्राप्त कर सकता है, अच्छा-से-अच्छा भोजन, शिक्षण, जलवायु प्राप्त कर सकता है, परन्तु क्या यह सब प्रज्ञा को उत्पन्न करता है? ऐसे व्यक्तियों की जानकारी है हमें, परन्तु क्या वे प्रज्ञावान हैं? धर्मावलम्बियों तथा अन्य लोगों की तरह साम्यवादी भी मन को नियन्त्रित करने तथा एक निश्चित रूप देने की कोशिश कर रहे हैं।

मन को एक निश्चित रूप देने के कुछ प्रत्यक्ष प्रभाव तो पड़ते ही हैं— अधिक कार्यक्षमता, मन की एक विशेष तत्परता और सतर्कता— लेकिन ये सब विभिन्न क्षमताएँ प्रज्ञा का निर्माण नहीं करतीं। प्रकाण्ड पण्डित लोग, जिनके पास अत्यधिक ज्ञान और विद्वत्ता है, और ऐसे लोग भी जो वैज्ञानिक ढंग से शिक्षित हैं— क्या वे प्रज्ञावान हैं? क्या तुम्हें नहीं लगता कि प्रज्ञा एक बिल्कुल ही भिन्न चीज है? वह वस्तुतः भय से समग्र मुक्ति है। ऐसे लोग जिनकी नैतिकता किसी-न-किसी प्रकार की सुरक्षा पर आधारित है वे नैतिक नहीं हैं, क्योंकि सुरक्षा की आकांक्षा भय का ही परिणाम है। भय तथा भय का निरोध, जिसे हम नैतिकता कहते हैं, वस्तुतः नैतिक है ही नहीं। भय से समग्र मुक्ति ही प्रज्ञा है, और प्रज्ञा प्रतिष्ठा की वस्तु नहीं है, न ही वह भय के माध्यम से परिष्कृत विभिन्न सद्गुण हैं। भय को समझने में ही एक ऐसी चीज का जन्म होता है जो कि मन के द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों से पूर्णतः भिन्न है।

तादात्म्य के साथ प्रयोग करना अच्छा है। हम किसी चीज को कैसे प्रयोग करते हैं? चाहे वह सरल-से-सरल चीज हो या जटिल-से-जटिल चीज। हम कहते हैं कि यह मेरा है— मेरी चप्पल, मेरा घर, मेरा परिवार, मेरा काम-धन्धा और मेरा आराध्य देव; तादात्म्य के साथ ही पकड़ने का संघर्ष चला आता है। उसे अपने नियंत्रण में रखना एक आदत बन जाती है। ऐसी कोई भी बाधा, जो उस आदत को तोड़ डाले, कष्ट है और फिर हम उस कष्ट पर विजय पाने के लिए संघर्ष करते हैं। लेकिन तादात्म्य, जो कि मन का भाव है, उस चीज से जुड़ा है जो ज्यों-का-त्यों रहता है। यदि कोई व्यक्ति उसके साथ वस्तुतः प्रयोग करे, अर्थात् उसके प्रति केवल सजग होना— बदलने या चुनाव करने की किसी आकांक्षा के बिना— तो वह अपने भीतर बहुत सारी आश्चर्यजनक चीजों को पायेगा। मन ही है अतीत, परम्परा तथा स्मृतियाँ जो कि तादात्म्य का आधार है और क्या मन तादात्म्य की इस प्रक्रिया के बिना कार्य कर सकता है? पता लगाओ, इसके साथ खेलो। रोजमर्रे की सामान्य चीजों के साथ तथा अत्यन्त अमूर्त चीजों के साथ जो तादात्म्य है उसकी गतिविधि के प्रति सजग रहो। विलक्षण चीजों का पता लगेगा— विचार कैसे मुरझा जाता है, वह अपने आपको ही कैसे धोखा देता है।

मन के गलियारों से सजगता को विचार का पीछा करने दो— आवरण हटाते हुए, कभी चुनाव करते हुए नहीं, सदा खोज करते हुए।

व्यक्ति जिस स्थिति में है, उसमें यह विशेष रूप से कठिन है कि वह आकांक्षा न करे, कुछ चीजों और घटनाओं की लालसा न रखे, तुलना न करे। लेकिन स्थिति जो भी हो, आकांक्षाएँ, लालसाएँ तथा

तुलना कायम रहती हैं। हम सदा लालायित रहते हैं— अधिक या कम के लिए, किसी सुख के सातत्य के लिए तथा दुख से बचाव के लिए। जो चीज वस्तुत: दिलचस्प है वह यह है : मन अपने भीतर एक केन्द्र का निर्माण क्यों करता है, जिसके चारों ओर वह घूमता है तथा अपना अस्तित्व बनाये रखता है? जीवन में है हजारों प्रभाव, असंख्य दबाव— चेतन और अचेतन। इन दबावों और प्रभावों में से हम कुछ को चुन लेते हैं और कुछ को हटा देते हैं और इस प्रकार हम धीरे-धीरे एक केन्द्र का निर्माण करते चले जाते हैं। उन प्रभावों और दबावों से प्रभावित हुए बिना हम उन्हें चुपचाप नहीं चले जाने देते हैं। हर प्रभाव, हर दबाव हमें प्रभावित करता है तथा उस प्रभाव को अच्छा या बुरा कहा जाता है। ऐसा नहीं लगता कि उस दबाव को हम ध्यान से देख पाते हैं या उसके प्रति सजग हो पाते हैं ताकि उसमें हम किसी भी ढंग से भाग न लें, उसका प्रतिरोध करते हुए या उसका स्वागत करते हुए। यह प्रतिरोध या स्वागत उस केन्द्र को उत्पन्न करता है जिससे हम कार्य करते हैं। क्या यह संभव है कि मन उस केन्द्र का निर्माण न करे? इसका उत्तर प्रयोग करने से ही प्राप्त हो सकता है, किसी प्रकार का दावा करने या खण्डन करने से नहीं। अत: प्रयोग करो और पता लगाओ। इस केन्द्र का अन्त होने के साथ ही सच्ची स्वतन्त्रता जन्म लेती है।

व्यक्ति आन्दोलित, चिन्तित और कभी-कभी भयभीत हो उठता है। ऐसी चीजें तो घटती ही रहती हैं। वे जीवन की दुर्घटनाएँ हैं। जीवन एक मेघाच्छादित दिन है। कुछ ही दिनों पहले दिन साफ था और धूप

खिली हुई थी, लेकिन अब वर्षा हो रही है, बादल छाये हुए हैं और ठंडक है, यह परिवर्तन जीवन की अवश्यम्भावी प्रक्रिया है। चिन्ता, भय हम पर अचानक आक्रमण कर देता है, उसके कारण भी होते हैं, गुप्त या बिल्कुल स्पष्ट, और थोड़ी-सी सजगता के साथ व्यक्ति उन कारणों को ढूँढ़ सकता है। लेकिन जो चीज महत्त्वपूर्ण है वह इन घटनाओं या दुर्घटनाओं के प्रति सजग होना तथा उन्हें समय न देना जड़ जमाने के लिए, स्थायी या अस्थायी रूप से। व्यक्ति इन प्रतिक्रियाओं को जड़ प्रदान करता है— जब मन तुलना करता है, उन्हें उचित ठहराता है, निन्दा करता है या स्वीकार करता है। तुन्हें पता है कि व्यक्ति को हर समय तत्पर रहना चाहिए, आन्तरिक रूप से, बिना किसी तनाव के। तनाव तभी उत्पन्न होता है जब तुम कोई परिणाम चाहती हो, और जो चीज पुनः उत्पन्न हो जाती है वही तनाव पैदा करती है, जिसे तोड़ना पड़ता है। जीवन को बहने दो।

किसी चीज के प्रति— किसी असुविधा, किसी कुण्ठा या किसी सतत तुष्टि के प्रति— अभ्यस्त हो जाना अत्यन्त विनाशकारी रूप से आसान है। व्यक्ति किन्हीं परिस्थितियों के साथ, पागलपन के साथ या वैराग्यवृत्ति के साथ अपना सामंजस्य कर ले सकता है। मन को खाँचों में यानी आदतों में कार्य करना पसन्द है और इस क्रिया को ही जीना कहा जाता है। जब तक कोई अत्यन्त सतर्क न हो तो अभिरुचियाँ हमें जीवन के एक ढाँचे की ओर वापस ले आती हैं। इस सब में तुम देखोगी कि इच्छाशक्ति यानी दिशा देनेवाली शक्ति कार्य करती रहती है— होने, उपलब्ध करने, बनने आदि की इच्छाशक्ति। इच्छाशक्ति ही चुनावकर्ता

का केन्द्र है और जब तक इच्छाशक्ति का अस्तित्व है तब तक मन केवल आदतों से ही कार्य कर सकता है— स्वनिर्मित आदत या आरोपित आदत। इच्छाशक्ति से मुक्ति ही असली समस्या है। इच्छाशक्ति से तथा चुनावकर्ता और ''मैं'' के केन्द्र से मुक्त होने के लिए कोई अपने साथ विभिन्न प्रकार की चालबाजी कर सकता है, लेकिन वह एक केन्द्र एक भिन्न नाम से तथा एक भिन्न आवरण के नीचे कायम रहेगा। जब कोई व्यक्ति आदत के वास्तविक अर्थ को देख लेता है तथा चुनाव करने, नाम देने, किसी अभिरुचि का अनुसरण करने जैसी अनेक चीजों के प्रति अभ्यस्त हो जाने के वास्तविक अर्थ को भी देख लेता है, जब इस सब का बोध हो जाता है, तब वास्तविक चमत्कार घटित होता है— इच्छाशक्ति की समाप्ति। इसके साथ प्रयोग करो, इस सबके प्रति सजग होओ, क्षण प्रति क्षण, कहीं पहुँचने की बिना किसी अभिलाषा के।

दक्षिण की जलवायु और उत्तर की जलवायु असाधारण रूप से भिन्न है। यहाँ लन्दन में, एक परिवर्तन के लिए, कोमल नीले आकाश में एक भी बादल नहीं है और ऊँचे पेड़ों ने अभी-अभी अपनी हरियाली दिखाना शुरू किया है। यहाँ वसंत ऋतु है, अभी शुरू हो रही है। यहाँ मनहूस वातावरण है, लोगों में प्रसन्नता नहीं है जैसा कि दक्षिण में है।

एक शान्त परन्तु अत्यन्त सतर्क और जागरूक मन एक वरदान है, वह पृथ्वी के समान है— असीम संभावनाओं से समृद्ध। जब ऐसा मन होता है, तुलना न करने वाला, निन्दा न करने वाला, तभी वहाँ अनन्त समृद्धि का होना संभव है।

ऐसा मत होने देना कि क्षुद्रता का धुआँ तुम्हारा दम घोंट दे और आग को बुझा दे। तुम्हें चलते रहना है, चीरते हुए, ध्वस्त करते हुए, कभी जड़ जमाते हुए नहीं। किसी समस्या को जड़ मत पकड़ने दो, उससे तुरन्त निपट लो और हर सुबह जागो ताजा, युवा, और निष्पाप.....।

अपने स्वास्थ्य के प्रति समझदार और सुनिश्चित बनो, भावना और भावुकता को अपने स्वास्थ्य के साथ हस्तक्षेप मत करने दो और न ही अपनी क्रिया का महत्व घटाने दो। बहुत सारे प्रभाव और दबाव हैं जो मन और हृदय को निरन्तर आकार देते हैं— उनके प्रति सजग रहो, उन्हें काट डालो और उनका गुलाम मत बनो। गुलाम होने का अर्थ है सामान्य होना। जागरूक होओ, प्रज्वलित होओ।

भय का सामना करो, उसे आमन्त्रित करो, उसे अचानक अप्रत्याशित रूप से तुम पर आक्रमण मत करने दो, बल्कि सतत उसका सामना करो, परिश्रम और प्रयोजन के साथ उसका पीछा करो। आशा है कि तुम सकुशल हो और उस सबसे भयभीत मत होओ, संभवत: इसका इलाज किया जा सकता है और हम इसका पता लगायेंगे। उसे तुम्हें भयभीत मत करने दो।

गहराई में, अपने भीतर, धीरे-धीरे मुरझाने की प्रक्रिया हो सकती है, इससे तुम अनभिज्ञ हो या भिज्ञ होते हुए तुम लापरवाह हो सकती हो। अवनति की लहर सदा हम सबके ऊपर रहती है, इसका महत्व नहीं है कि किसके ऊपर। उससे आगे हो जाना, बिना प्रतिक्रिया के उसका सामना करना तथा उससे बाहर हो जाना— इसके लिए चाहिए महान

ऊर्जा। वह ऊर्जा तभी आती है जब किसी तरह का कोई भी द्वन्द्व नहीं होता, चेतन या अचेतन। अत्यन्त जागरूक होओ।

समस्याओं को जड़ मत पकड़ने दो। तत्काल उनसे गुजर जाओ, उन्हें आरपार काट डालो जैसे मक्खन को काटती हो। उन्हें कोई चिह्न मत छोड़ने दो, जैसे ही वे उठें उनसे निपट जाओ। समस्याओं को आने से तुम रोक नहीं सकती, लेकिन उनसे तत्काल निपट जाओ।

तुम्हारे भीतर एक सुस्पष्ट परिवर्तन हुआ है— गहरी आन्तरिक जीवन्तता, शक्ति और स्पष्टता, इसे रखे रहो, इसे कार्य करने दो, इसे गहराई और व्यापकता से प्रवाहित होने के लिए अवसर प्रदान करो। चाहे जो कुछ घटित हो परन्तु परिस्थितियों से, परिवार से तथा स्वयं अपनी शारीरिक स्थिति से अभिभूत मत होओ। समुचित रूप से खाओ, व्यायाम करो और लापरवाह मत बनो। एक विशेष स्थिति तक पहुँचने के बाद, चलते रहो, वहीं पर मत रुके रहो— या तो आगे जाओ या तुम पीछे हटो। तुम स्थिर नहीं रह सकती। अनेक वर्षों से तुम इस आन्तरिक लहर पर सवार होकर यात्रा करती रही हो— अपने भीतर, अन्तर्मुखी होकर, लेकिन उस अन्तर्मुखी गति से अब तुम्हें बाहर जाना चाहिए— अधिक लोगों से मिलो— फैलो।

बहुत ध्यान किया है और अच्छा रहा है। मैं आशा करता हूँ कि तुम भी कर रही हो— हर विचार और भाव के प्रति सजग होने से आरम्भ करो, सारा दिन— स्नायु और मस्तिष्क तब शान्त एवं निश्चल हो जाते

हैं— यह ऐसी चीज है जिसे नियन्त्रण द्वारा नहीं किया जा सकता— तभी वस्तुतः ध्यान शुरू होता है। इसे सम्पूर्णता के साथ करो।

चाहे जो कुछ घटित हो, परन्तु शरीर को मन के स्वरूप का निर्माण मत करने दो— शरीर के प्रति सजग रहो, अच्छी तरह से खाओ, दिन के समय कुछ घंटों के लिए एकान्त में अपने साथ रहो, पीछे की ओर मत फिसलो और परिस्थितियों का गुलाम मत होओ। प्रचण्ड होओ— जागरूक होओ।

●

परिसंवाद

जे. कृष्णमूर्ति प्रज्ञा परिषद्, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया द्वारा त्रैमासिक पत्रिका 'परिसंवाद' के माध्यम से श्री जे. कृष्णमूर्ति (1895-1986) के चिन्तन-दर्शन को हिंदी में प्रकाशित करने का कार्य पिछले दो दशकों से किया जा रहा है। पत्रिका में कृष्णजी से संबंधित आलेखों, साक्षात्कारों, नये प्रकाशनों, कार्यशालाओं, रिट्रीट, गैदरिंग एवं कृष्णमूर्ति फाउंडेशन से संबंधित सूचनाएं भी प्रकाशित होती हैं।

'परिसंवाद' का सदस्य बनने के लिए सदस्यता शुल्क इस प्रकार भेजें :

वार्षिक सदस्यता 100.00

पांच वर्षीय सदस्यता : 250.00

आजीवन सदस्यता : 1000.00

परिसंवाद के पुराने अंक :

परिसंवाद के पुराने अंकों के सात खंड तैयार किए गए हैं जिनमें सन् 1986 से लेकर सन् 2006 तक के अंकों का संकलन किया गया है। एक खंड का मूल्य : 150.00 है। परिसंवाद का सदस्य बनने के लिए तथा पुराने अंकों को मंगाने के लिए उपयुक्त धनराशि मनीऑर्डर द्वारा अथवा 'K.F.I. Study Centre, Varanasi' के नाम डिमांड ड्राफ्ट द्वारा जे. कृष्णमूर्ति प्रज्ञा परिषद, राजघाट फ़ोर्ट, वाराणसी के पते पर भेजें।

हिन्दी में उपलब्ध कृष्णमूर्ति साहित्य

1.	ज्ञात से मुक्ति	रु. 70.00
2.	ध्यान	रु. 40.00
3.	ध्यान (नवीन परिवर्धित संस्करण)	रु. 125.00
4.	हिंसा से परे	रु. 80.00
5.	गरुड़ की उड़ान	रु. 70.00
6.	संस्कृति का प्रश्न	रु. 100.00
7.	शिक्षा एवं जीवन का तात्पर्य	रु. 60.00
8.	शिक्षा संवाद	रु. 80.00
9.	स्कूलों के नाम पत्र	रु. 60.00
10.	स्कूलों को पत्र भाग-2	रु. 40.00
11.	शिक्षा क्या है?	रु. 175.00
12.	ईश्वर क्या है?	रु. 125.00
13.	प्रथम और अंतिम मुक्ति (सजिल्द द्विभाषी संस्करण)	रु. 500.00
14.	आपको अपने जीवन में क्या करना है?	रु. 175.00
15.	आमूल क्रान्ति की आवश्यकता	रु. 100.00
16.	अन्तिम वार्ताएँ	रु. 70.00
17.	जीवन भाष्य-I	रु. 70.00
18.	जीवन भाष्य-II	रु. 70.00
19.	जीवन भाष्य-III	रु. 80.00
20.	मृत्यु और उसके बाद	रु. 40.00
21.	वाशिंगटन वार्ताएँ	रु. 25.00
22.	सुखी वही जो कुछ नहीं है	रु. 20.00

विस्तृत जानकारी के लिए सम्पर्क करें :

कृष्णमूर्ति स्टडी सेंटर, कृष्णमूर्ति फाउण्डेशन इण्डिया
राजघाट फोर्ट, वाराणसी-221 001,
दूरभाष : 0542-2430289, ई-मेल : kcentrevns@satyam.net.in

सन् 1948 से सन् 1960 के प्रारम्भिक दिनों के बीच जे० कृष्णमूर्ति -लोगों के लिए आसानी से सुलभ थे और इस दौरान अनेक लोग उनके पास आये— व्यक्तिगत मुलाकातों और चिट्ठी-पत्री में सम्बन्ध खिलते गये। इस दौरान लिखे उनके कुछ मर्मस्पर्शी पत्रों का संकलन इस पुस्तिका में मौजूद है। ये पत्र उन्होंने जिस युवा महिला मित्र को लिखे थे वह उनके पास घायल तन-मन की दशा में आयी थी। बारह वर्षों के दौरान लिखे इन पत्रों में दुर्लभ करुणा और स्पष्टता झलकती है। इन्हें पढ़ते हुए मन के घाव भरने लगते हैं तथा नवबोध का उदय होता है, अलगाव और फ़ासले मिटने लगते हैं, शब्दों की एक ऐसी धारा बहती है जिसमें एक भी शब्द अनावश्यक नहीं होता; इस प्रकार ज़ख़्मों का भरना और शिक्षा दोनों एक साथ घटित होते हैं।

Library IIAS, Shimla
H 181.49 K 897 S
G6097

मूल्य : रुपये 20/-